देह···ी संभव है ? मै तुम्हारी तरह तपस्या-अपस्या एक दिन भी नहीं कर सकती।

उमा—क्या कहती हो ? पति रूठेगा तो मनाओगी नहीं ?

कला—नहीं। रूठने का कारण होता है कला के रूप का अज्ञान। उसे स्वयं ही दूर होना चाहिए। मनाने से वह बढ़ता या बिगड़ता ही है। पति गृहपति होता है, गृहपत्नी का पति नहीं हो जाता।

उमा फिर हँसी—ठीक है, और स्त्री होती है पति द्वारा पूजित होने के लिए—मनु का प्रमाण !

कला—नहीं, मै उन शास्त्रों के आ[illegible]
मेरा दावा है कि इस यु[illegible]
कला के [illegible] भयकर शत्रु हो रही थी [illegible]
[illegible] स किसी एक का ही न[illegible]
के सामंजस्य को न[illegible]ता का अन्त कर अब कर्मयुग आ रहा
उसे तो तीनो का [illegible] कहना उस नाम के पिछले अर्ध-सभ्य युग का
[illegible]ह तैया[illegible] व बढ़ाना होगा। कलियुग के नाम से अब कोई अनुचित
[illegible]व या धाँधली चलने की नहीं।'

'एक ही दिन मे ब्रजेशजी से यह सब सीख लिया। यही कहा न उन्होंने तुम्हारी कलापूर्ण बाते सुनकर ?'

कला ने मुँह बनाकर कहा—'कला पर इतनी जल्दी किसी का [illegible]व नहीं पड़ता। वह इस तरह बदला नहीं करती।'

उमा हँसी। बोली—'खूब ! कला नही बदलती। बदला करता है धर्म और बदला करती है नीति। क्यो न ?'

कला—इतने समय तक तुमसे-मुझसे कितनी बार इस पर बात-चीत हो चुकी है और—

बात काटकर उमा कह उठी—वह सब व्यर्थ नहीं हुई। पर अब उसका व्यावहारिक रूप आज ही से दिखलाई देगा। मै आठ

२

ब्रजेश का रंग-ढंग कला के पिता को जितना पसन्द था कला की माँ को उतना ही नापसन्द। ब्रजेश टेनिस या फुटबाल खेलने की हँसी उड़ाते थे। वे उस 'फौजी' शिक्षा में बहुत समय पहले अपना नाम लिखा चुके थे, जिसे इस देश का कोई युवक किसी तरह प्राप्त कर सकता है।

ब्रजेश के पिता भी फौज मे रह चुके थे, किन्तु वे ब्रजेश को डाक्टर बनाना चाहते थे। उनकी अकस्मात् मृत्यु हो जाने से उनकी सहधर्मिणी ने उनकी इच्छा के अनुसार इन्हे डाक्टरी पढ़ने को कहा। इन्होंने डाक्टरी पास की, पर फौजी शिक्षा भी प्राप्त कर ली। विवाह के नीलामी बाजार मे खड़े होना इन्हे कभी न रुचा, इसलिए इनके लिए जो लोग ऐसी बोली बोलना चाहते थे उन सबको निराश होना पडा।

इस समय झाँसी मे ब्रजेश और उनकी माँ सरकारी बँगले मे रहते हैं। कला के पिता की तब्दीली झाँसी के लिए सात वर्ष पूर्व हुई थी। तब से कोशिश करके वे यही बने हुए है। उनका नाम है अशोककुमार। वे ब्रजेश के पिता के घनिष्ठ मित्रो में से थे। दोनों मित्रो ने 'जाति-पाँति के बन्धनो' को अस्वाभाविक—और व्यक्ति, समाज, देश तथा मनुष्य मात्र के लिए हानिकारक—समझकर उन्हे तोड़ने का निश्चय किया था। पर दोनों के विवाह 'जाति की सीमा' के भीतर ही हुए। तब दोनों ने यह प्रण किया कि वे अपनी सन्तानो को इस बन्धन से मुक्ति पाने की स्वतन्त्रता देगे, उन्हे इसके लिए उत्साहित करेंगे और इस शुभ, आवश्यक और

बात है न ? तो उसे यहाँ कोई तकलीफ या शिकायत नहीं हो सकती। इतने बहुत रुपये हर माह क्या करेगा ?

ब्रजेश—उसी का शौक पूरा किया करूँगा ? खूब बात कहती हो माँ। तुम क्या जानो कि इस देश और इस दुनिया की हालत कैसी है।

'फिर देश और दुनिया ? पहले अपने घर मे चिराग जलाया जाता है।' माँ ने इस तरह से कहा, जैसे वह ब्रजेश को चिढ़ाना चाहती हो।

ब्रजेश ने कहा—यह तो बहुत समय से हो रहा है माँ। इतने अधिक समय से कि जो आग एकता से शुरू मे सहज ही बुझ जाती उसके लिए अब न जाने कितने घरो के चिराग हमेशा के लिए गुल हो जावेगे।

'ऐसा न कह बेटा।' माँ व्यथित हृदय से बोली।

ब्रजेश—माँ, अब कहना-सुनना कुछ नहीं है। अब तो सब कुछ आँखो के सामने ही है। मै अब उनके घर न जाऊँगा।

माँ—यह ठीक नहीं, तुझे जाना ही होगा। स्वप्न देखना छोड़ दे। जो ससार दिखाई देता है उसी को देखकर काम किया कर।

इसके सातवे दिन ब्रजेश ने माँ से कहा—माँ, मै वहाँ जा रहा हूँ। तुम चलना चाहो तो एक ताँगा लाऊँ, तुम भी चली चलो। उन्होने बहुत विनयपूर्वक तुम्हे बुलाया है।

माँ—यह कैसे हो सकता है ? मैं वहाँ नहीं जा सकती। अगर वे लड़की को मेरे यहाँ न भेजना चाहे तो यहीं गोपालबाग भेज दे, मै देख लूँगी।

ब्रजेश—इसे कौन कहेगा ?

माँ—मै लिखे देती हूँ।

ब्रजेश—तुम कार्ड भेज देना। मै तुम्हारा पत्र लेकर न जाऊँगा।

३

लखनऊ मे, डाक्टरी पढ़ते समय, ब्रजेश की जिन लोगो से घनिष्ठता हुई उनमें एक तड़ितबाला थी। उसका यह नाम स्वयं उन्हीने रक्खा था। तड़ितबाला से उनका परिचय एक विचित्र संयोग से हो गया था। एक स्वयसेवक-समिति के वे प्रधान हो गये थे। वह एक मेले मे प्रबन्ध कर रही थी। कुछ गुंडो ने आपस मे सलाह कर एक झगड़े का प्रारम्भ कर दिया। अन्देशा हुआ कि झगडा भयानक साम्प्रदायिक रूप धारण कर लेगा। उस समय उन्होंने अपने सभी साथियो को बुलाकर काम में लगा दिया, पर ऐसा जान पड़ने लगा कि वे सफल न हो सकेंगे। एकाएक सेविका-समिति का एक झुंड आ पहुँचा। उसने वह काम कर दिखाया जो ये न कर पाये थे। इस सेविका-समिति का सर्वस्व उन्होंने इस बाला के रूप मे देखा। उस समय तो उसके घर का पता दरयाफ़्त करके—और वह भी दूसरी स्वयं-सेविका से—वे अपने काम मे लगे रहे; किन्तु उसके दूसरे ही दिन वे उसके घर पहुँचे।

घर पहुँचकर उन्होने जो कुछ देखा उससे उन्हे बहुत आश्चर्य और साथ ही बहुत दु.ख भी हुआ। घर मे माँ थीं और दो छोटे बच्चे। माँ बहुत ही पढ़ी-लिखी थी। तड़ितबाला समिति से 'निर्वाह मात्र' के नाम पर इतना कम पाती थी कि उससे निर्वाह होना कठिन हो रहा था। फिर भी वह अपना पूरा समय समिति के कार्यों को ही देती थी। पैसे के लिए समय बचाकर और कोई काम करने की बात तो वह सोच ही न सकती थी।

३

लखनऊ मे, डाक्टरी पढ़ते समय, व्रजेश की जिन लोगो से घनिष्ठता हुई उनमे एक तड़ितवाला थी। उसका यह नाम स्वयं उन्हींने रक्खा था। तड़ितवाला से उनका परिचय एक विचित्र संयोग से हो गया था। एक स्वयसेवक-समिति के वे प्रधान हो गये थे। वह एक मेले मे प्रवन्ध कर रही थी। कुछ गुंडों ने आपस मे सलाह कर एक झगड़े का प्रारम्भ कर दिया। अन्देशा हुआ कि झगड़ा भयानक साम्प्रदायिक रूप धारण कर लेगा। उस समय उन्होने अपने सभी साथियो को बुलाकर काम मे लगा दिया, पर ऐसा जान पड़ने लगा कि वे सफल न हो सकेगे। एकाएक सेविका-समिति का एक झुंड आ पहुँचा। उसने वह काम कर दिखाया जो ये न कर पाये थे। इस सेविका-समिति का सर्वस्व उन्होने इस बाला के रूप मे देखा। उस समय तो उसके घर का पता दरयाफ़ करके—और वह भी दूसरी स्वयं-सेविका से—वे अपने काम मे लगे रहे, किन्तु उसके दूसरे ही दिन वे उसके घर पहुँचे।

घर पहुँचकर उन्होने जो कुछ देखा उससे उन्हे बहुत आश्चर्य और साथ ही बहुत दुःख भी हुआ। घर मे माँ थी और दो छोटे बच्चे। माँ बहुत ही पढ़ी-लिखी थीं। तड़ितवाला समिति से 'निर्वाह मात्र' के नाम पर इतना कम पाती थी कि उससे निर्वाह होना कठिन हो रहा था। फिर भी वह अपना पूरा समय समिति के कार्यों को ही देती थी। पैसे के लिए समय बचाकर और कोई काम करने की बात तो वह सोच ही न सकती थी।

पहले-पहल समझा कि उसके इस काम से अलग किये जाने का दोष बहुत अंश में उन्ही पर है।

तभी पहले-पहल तड़ितबाला ने उनसे कहा—मेरे पिता अँगरेजी के लेखक थे। पर उन्होने हिन्दी मे भी कई पुस्तके लिखी थीं। यदि मेरी माँ अकेली होतीं तो उन हस्तलिपियो के लालच से, जो अब भी हमारे पास है, उन्हे हमारा कोई-कोई सम्बन्धी अपने साथ लिवा ले जाकर रखता। पर हम दो बहनो और एक भाई के पालन-पोषण का भार ऐसा समझा जाता है कि उससे उस लालच की पूर्ति होने पर भी हानि होने की ही आशंका है, इसी लिए उन रिश्तेदारों मे से कोई कभी यहाँ आता तक नहीं।

व्रजेश ने तुरंत कहा—आप मुझे वे पाडुलिपियाँ दिखाइए। मै आज ही जाकर प्रकाशको से बातचीत करूँगा।

तड़ितबाला उन्हे तुरंत लाई। थोड़ी देर देखकर वे दंग रह गये। 'ये तो हजारो रुपयो की हैं। आपने इन्हे कभी किसी को दिया क्यो नही? मेरा खयाल था कि इस देश की प्राचीन सभ्यता और मुस्लिम-कालीन संस्कृति तक पर जिन लेखकों ने अच्छे ढंग से लिखा है उन सबको मै जानता हूँ। पर आपके पिता का तो मैने इन क्षेत्रों मे नाम तक नहीं सुना, यद्यपि लिखा है उन्होने इतना अधिक अच्छा।'

'वे अपने नाम से न लिखते थे। कई बनावटी नामो से उन्होने लिखा, एक नाम से नहीं; इसी लिए वे किसी नाम से भी प्रसिद्ध नहीं हुए। असल मे प्रसिद्धि से उन्हे बड़ी चिढ़ थी। और कौन यह जानता था कि मौत इतनी जल्दी आ जावेगी।' तड़ितबाला की माँ ने आँखो मे आँसू भरकर कहा।

उसी दिन से व्रजेश का उस परिवार से अभिन्न सम्बन्ध हो गया। चार वर्ष और बीत गये।

इन चार वर्षों मे व्रजेश तड़ितबाला और उसके भाई-बहन को एक घंटा रोज पढ़ाते रहे और एक घंटे की जगह तीन घंटे प्रति-

क्या वे तड़ितबाला को भूल सकते है? या उसे न भूल सकने के कारण ही यह सब कर रहे है? लखनऊ मे व्रजेश बराबर अकेले रहे थे। उनकी माँ ने वहाँ जाना नहीं चाहा, न उन्होने कभी जोर दिया। झाँसी की नियुक्ति होने पर वे उन्हें अपने साथ लेकर ही यहाँ आये। माँ को इससे विशेष प्रसन्नता होनी ही चाहिए।

'चित्र को देखते रहने की इच्छा मे चित्र की सार्थकता है, खाने को तुरंत ही खा डालने और खाते रहने की इच्छा मे खाने की।' उमा ने ओठो-ओठो मे हँसते हुए जवाब दिया।

'तुमने लड़की को कालेज, यूनिवर्सिटी मे पढ़ाना ठीक नही समझा क्या बहन!' साथ की दूसरी पड़ोसिन ने पूछा। उनकी लड़की एफ० ए० मे पढ़ रही थी।

'जगह-जगह तब्दीली होने से इसका इन्तजाम ही न हो सकता रहा होगा?' दूसरी पड़ोसिन ने कह दिया।

'यह बात नही है। मेरी लड़की ने कालेज और यूनिवर्सिटी दोनो जगह शिक्षा पाई है। वह अन्तिम परीक्षा देकर यहाँ आई है। बोर्डिंग हाउस मे वह रहती थी।' कला की माँ ने सबको बतलाया।

'बोर्डिङ्ग में तो लड़के रहते है?' पहली पड़ोसिन ने मुँह बनाकर कहा।

'वे अलग रहते है। इतना भी तुम नहीं जानतीं?' दूसरी पड़ोसिन ने कह दिया।

पर यह पहली पड़ोसिन को न रुचा। उन्होंने कहा—'अलग क्या रहते है? पास ही पास रहते है। मैं सब जानती हूँ। मैंने सुना है कि पिछले साल एक लड़के ने एक बोर्डिङ्ग के भीतर जाकर वहाँ की रखवाली करनेवाली को मार डाला था।'

'यह गलत है। किसी ने धमकी भर दी थी।' दूसरी पड़ोसिन ने कहा।

'तुम न जाने कहाँ की बात कहती हो? मैं दूसरी जगह की बात कह रही हूँ।'

उमा हँस पड़ी। और सब लोग भी हँसने लगे।

उधर कला के पिता व्रजेश से कह रहे थे—देखिए, आपके पूज्य पिता की यह हार्दिक इच्छा थी कि हम लोग अपनी सन्तानों का

व्रजेश—जी नहीं, जिसमें सबसे अधिक मानवता होगी वह सबसे अधिक पूज्य होगा—चाहे जिस देश और जिस जाति का हो वह। थोड़े से ही ऐसे मनुष्य ससार मे निकलेंगे। और हमारी ऐसी समाज बनाने की दृढ़ इच्छा होने पर वे हर समय दिखाई देगे। उन्हीं को हम सर्वोच्च सिंहासन पर बिठलावेंगे। यही मानवता की ठोस भित्ति है।

अशोककुमार ने हँसते हुए ही पूछा—'काहे का होगा वह सिंहासन ?'

व्रजेश ने तुरंत उत्तर दिया—'मानव-हृदय का।' अशोककुमार ने इस बार उनकी ओर उसी दृष्टि से देखा जैसी बुजुर्गों में अबोध नवयुवको के प्रति पाई जाती है और कहा—मानवता का क्षेत्र एक नहीं है। जब तुम एक ही क्षेत्र मे 'मानवता-मानवता' चिल्लाओगे तो दूसरे क्षेत्रो के प्रति अन्याय ही करोगे। इसके सिवा जिसमे आज तुम्हे अत्यधिक मानवता दिखाई देती है उसी मे कल, घटना-चक्र से, दानवता की कमी भी न मिलना असम्भव बात नहीं।

'यही तो मै चाहता था कि आप मेरे विचार जान ले—फिर—' व्रजेश अपनी बात पूरी न कर सका। अशोककुमार ने कहा—मैं तुम्हारे विचारो को जबरदस्ती अपने अनुकूल न बनाना चाहूँगा। तुम भी मेरे विचारो को इस तरह बदल नहीं सकते। विचारो मे अन्तर रहना, मत-भेद होना, हम लोग कभी बुरी बात नहीं समझते। यह तो स्वाभाविक ही है। इसी से तो उन्नति होती है। हम लोग धीरे-धीरे विचार-विनिमय करते रहेंगे। इसके लिए विवाह रोकने से क्या लाभ ?

इसी समय तारवाले ने साइकिल से उतरकर एक तार का लिफाफा व्रजेश को देकर कहा—बाबूजी, मैं आपके घर पर गया था। मालूम हुआ आप लोग यहाँ आये है, तो फौरन् ही इधर चल पड़ा।

तड़ितवाला ने आश्चर्य प्रकट करके कहा—कई बार। उनको क्यों न बतलाती ? वे तो विज्ञान के भक्त हैं, जाति-पाँति की ऐतिहासिक खोजो का जाननेवाला वैज्ञानिक यही मानने को विवश होता है कि कोई जाति विशुद्ध नही कही जा सकती, सभी मे अनेक रक्तो का मिश्रण है और कोई धर्म भी ऐसा नहीं जिसका अन्य धर्मों से ऐसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध न हो। फिर वे मेरी बात से बुरा क्यों मानते ? बल्कि ऐसी बाते तो ठीक तरह से उन्हीं ने हमारे मन में जमाई है।

कला के दिल मे धड़कन होने लगी। उसने कठिनाई से कहा—क्या वे आपसे विवाह कर सकते हैं ?

तड़ितवाला उठकर खड़ी हो गई। बोली—आपको ऐसा प्रश्न करने का अधिकार नहीं है। इस प्रश्न को आप पूछना ही चाहे तो उन्हीं से पूछिए। उन्होने पिछले पाँच वर्षों से मेरे परिवार के साथ अपने घर का सा सम्बन्ध रक्खा है। मेरे भाई-बहन को और मुझे भी पढ़ाने-लिखाने मे उन्होने प्रतिदिन अपने अनेक घंटे व्यतीत किये हैं। उन्होने बार-बार हमसे कहा है कि वे आजकल की सामाजिक व्यवस्था को हानिकारक और प्रगति-विरोधी समझते हैं और उन्होने बतलाया है कि उनके पिता का भी यह कहना था कि इस व्यवस्था से हर प्रकार के—शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास मे बाधा पड रही है।

कला विचित्र स्वर मे कह उठी—तब फिर उनसे क्या पूछना है ? वे तो आपके ही हो चुके हैं। किन्तु यह धोखेबाजी क्यो ? दूसरो को अपमानित करके उनकी दिल्लगी उड़ाने का शौक तो आदमियत नहीं है।

अब वह उठकर चल खडी हुई। उसकी आँखो से टप-टप आँसू गिर रहे थे।

उमा अब भी बैठी हुई थी। उसने तड़ितवाला से कहा—आप थोडी देर और बैठ जाइए। क्या व्रजेशजी ने या उनकी

तड़ितबाला—हरगिज नहीं। मुझे जो पहनावा पसन्द है उसे ही मै पहनती हूँ। तब मैं आपके यहाँ न आऊँगी। व्रजेशजी ने मेरा नाम तड़ितबाला रखना चाहा और उसे मैने इसी शर्त पर स्वीकार किया कि वे मेरे 'ड्रेस' मे कभी अन्तर न देखेगे, बल्कि स्वयं भी बराबर 'सूट' पहना करेगे।

उमा इस बार सच्ची हँसी हँसी। बोली—तभी वे हर समय सूट-बूट मे ही दिखाई देते है। किन्तु इसे तो अनेक लोग आप लोगो की मानसिक संकीर्णता कह सकते हैं।

तड़ितबाला—जब तक हमे कोई संकीर्णता गलत नहीं मालूम होती, तब तक हम उसे अलग कैसे कर सकते है? मुझे तो यह संकीर्णता नहीं, परम आवश्यकता जान पड़ती है।

उमा—जिस समाज में हम लोग रहते आये हैं उसे छोड़कर हमे क्या मिलेगा? समाज के विरोध में इस तरह शक्ति का अपव्यय करके हम अपने देश और संसार के लिए भी कुछ करने योग्य न रह जावेगे। इस देश मे शिक्षा की कितनी कमी है, व्यवसायो की कैसी अवनति है, इन सबकी पूर्ति के लिए क्या हमे कुछ भी न करना चाहिए?

तडित०—आपका विवाह हो गया है न?

उमा—हाँ। पर इससे क्या?

तडित०—इसी से तो—अब आपको जितनी बाते सूझेगी या आपका मन जितनी बातो का समर्थन करेगा, वे सब सीधी-सादी शान्तिपूर्ण बाते होगी—उनमे धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि व्यवस्थाओ मे से किसी में कुछ भी उलट-पुलट की कोई भावना न होगी। क्या कला व्रजेशजी की जाति की हैं?

उमा—व्रजेशजी तो स्थल की जातियों के मानव, पशु, कीट, पतंग और पक्षी ये ही पांच विभाग मानते है। मानव और पशु के ही वैसे सम्बन्ध को वे दोगलापन समझते है न कि किसी

हुई थी। उमा भी उसी के पास बैठ गई। तब बोली—बड़े विचित्र संघर्ष मे तड़ितबाला भी पड गई। एक बार उसने और किसी दिन यहाँ आने को कहा और फिर थोड़ी ही देर मे कहा कि आज ही लखनऊ चली जावेगी। मै यही समझती हूँ कि ब्रजेशजी मे इतना साहस नही है कि वे अपनी माँ से यह कह सकते कि वे अपना मन और वचन लखनऊ मे तड़ितबाला को दे चुके है। इन्हे उन्होने यह बताया भी नहीं कि उनकी माँ यही है।

'पिताजी का कहना तो यह है कि इस बीच मे उनकी माँ से उनके कई रिश्तेदार मिलने आये है और वे सब यह धमकी दे गये है कि अगर मेरे साथ विवाह होगा तो वे उसमें सम्मिलित न होगे। फिर तड़ितबाला के साथ विवाह करने मे वे कैसे साथ दे सकते है ?' कला ने आँखे नीचे किये हुए कहा।

'इन धमकी देनेवालो के लिए जैसी तड़ितबाला, वैसी ही तुम। सौभाग्य यह है कि अब इन लोगो के समाज मे कोई विशेष शक्ति नहीं। युवको और नवयुवको की शक्ति इतनी बढ़ी-चढ़ी है कि पिछले युग-वालो की कुछ भी चल नही सकती। इस नव समाज मे भी सबसे प्रगतिशील दल के लिए तुम और तड़ितबाला एक सी ही हो। किन्तु इसका अभी उतना जोर नहीं। अगर ब्रजेशजी इसका साथ देना चाहेगे तो उन्हे अपनी माँ का साथ छोड़ देना पड़ेगा।' उमा ने कहा।

कला—हम लोगो का तो खयाल है कि जिन्हे तुम पिछले युग-वालो का समाज कह रही हो उनका अभी इतना प्राबल्य है कि उनकी बात न मानने पर भी उन्हे अपनी माँ का साथ छोड़ना पड़ेगा।

'यह बात बीस वर्ष पहले की है। पिछले बीस वर्षों मे बहुत परिवर्तन हुआ है।' उमा ने दृढ स्वर में कहा।

कला—किन्तु अगर इस तरह की तब्दीली की तेज लहरो के साथ हम चले तब तो सामाजिक संगठन ही असंभव हो जावेगा—केवल उच्छृङ्खलता एक दिन दिखाई देगी।

ऐसा ऊँचा समझने लगे हैं कि मेरी लड़की से विवाह न करने के लिए तरह-तरह के बहाने बनाते हैं और चुपके-चुपके कोशिश करके अपनी तब्दीली फिर लखनऊ करा ली है। अगर मुझे ऐसा ज़रा भी ख़याल होता कि अपने बाप जैसी सच्ची उदार प्रकृति इनकी नहीं है बल्कि संकीर्णता की गन्दगी मे ये फँस गये है तो मैं यह अपमान झेलने से बच जाता।

कला की माँ ने यह सब सुनकर कहा—असल बात तुम्हे मालूम नही है। वे कम उदार नही बने हैं। उदारता की सीमा लाँघ गये हैं। वे जिससे विवाह करना सोच रहे हैं वह हिन्दू भी नहीं है। लेकिन उनकी माँ, अपने जीते जी, ऐसा विवाह न होने देगी। खुद उनकी यह हिम्मत नहीं हुई कि उस लड़की को अपने घर मे ठहराते। हम लोगो को सब बाते मालूम हो गई है।

अशोककुमार ने पूछा—कौन लड़की है वह ?

कला की माँ ने उत्तर दिया—वही जिसका नाम ख़ुद इन्होंने मेघवाला या विजलीवाला ऐसा ही कुछ रक्खा है।

अशोककुमार—क्या ? वह तडितवाला ! उसके पिता तो किसी भी धर्म-कर्म मे विश्वास न करते थे। बड़ी बुरी किताबे लिखी हैं उन्होंने इन विषयो पर। और, सुना है कि, उनमें से कुछ एम० ए० में फ़िलासफी मे पढाई जाती है। आज-कल की पश्चिमी सभ्यता जो भी करे वह थोडा।

कला की माँ—उमा कहती थी कि 'अधिकतर डाक्टर लोग भी नास्तिक ही होते हैं। लोगो के शरीर के अंगो को चीरने-फाड़ने, जोड़ने और अच्छा करने का कुछ ज्ञान हो जाने और ऐसी कुछ शक्ति पा जाने से वे ईश्वर के अस्तित्व की भी आवश्यकता नहीं समझते। कला तो ऐसी है नहीं। वह तो ईश्वर को ही सबसे बढ़कर और सबसे सुन्दर कलाकार समझती है, फिर हमों क्यों ऐसे अनमिल विवाह के लिए दौड-धूप करके परेशान हों। दहेज न सही, किसी दूसरे

ऐसा ऊँचा समझने लगे हैं कि मेरी लड़की से विवाह न करने के लिए तरह-तरह के बहाने बनाते हैं और चुपके-चुपके कोशिश करके अपनी तब्दीली फिर लखनऊ करा ली है। अगर मुझे ऐसा जरा भी खयाल होता कि अपने बाप जैसी सच्ची उदार प्रकृति इनकी नही है बल्कि संकीर्णता की गन्दगी मे ये फँस गये हैं तो मै यह अपमान झेलने से बच जाता।

कला की माँ ने यह सब सुनकर कहा—असल बात तुम्हे मालूम नही है। वे कम उदार नही बने हैं। उदारता की सीमा लाँघ गये हैं। वे जिससे विवाह करना सोच रहे हैं वह हिन्दू भी नहीं है। लेकिन उनकी माँ, अपने जीते जी, ऐसा विवाह न होने देगी। खुद उनकी यह हिम्मत नहीं हुई कि उस लड़की को अपने घर मे ठहराते। हम लोगों को सब बाते मालूम हो गई है।

अशोककुमार ने पूछा—कौन लड़की है वह?

कला की माँ ने उत्तर दिया—वही जिसका नाम ख़ुद इन्होने मेघबाला या विजलीबाला ऐसा ही कुछ रक्खा है।

अशोककुमार—क्या? वह तडितबाला! उसके पिता तो किसी भी धर्म-कर्म मे विश्वास न करते थे। बडी बुरी किताबे लिखी हैं उन्होने इन विषयो पर। और, सुना है कि, उनमें से कुछ एम० ए० में फिलासफी मे पढ़ाई जाती हैं। आज-कल की पश्चिमी सभ्यता जो भी करे वह थोड़ा।

कला की माँ—उमा कहती थी कि अधिकतर डाक्टर लोग भी नास्तिक ही होते हैं। लोगो के शरीर के अंगो को चीरने-फाडने, जोडने और अच्छा करने का कुछ ज्ञान हो जाने और ऐसी कुछ शक्ति पा जाने से वे ईश्वर के अस्तित्व की भी आवश्यकता नहीं समझते। कला तो ऐसी है नहीं। वह तो ईश्वर को ही सबसे बढ़कर और सबसे सुन्दर कलाकार समझती है, फिर हमीं क्यों ऐसे अनमिल विवाह के लिए दौड-धूप करके परेशान हो। दहेज न सही, किसी दूसरे

अशोककुमार का मुँह लाल हो गया। बोले—यह सब वे ही कह सकते है जो जान-बूझकर मेरे बाबत जबरदस्ती बुराई फैलाना चाहते हैं या जो मेरे बारे मे, असल मे, कुछ जानते ही नही।

कला की माँ—लोग तो यह देखते है कि कितनी तनख्वाह मिलती है और परिवार मे कितने आदमियो का खर्च है। यो तुम जग को अपना धन लुटाया करो, दुनिया उसे ठीक नहीं कह सकती।

अशोककुमार ने क्रोध को हँसी मे परिवर्तित करके कहा—तुम्हारी दुनिया न ?

क्रोध की अपेक्षा यह हँसी कला की माँ को अधिक अखरी। फिर भी उसने कहा—तुम्हारी दुनिया तो ऐसे बुद्धिमानो की है जिनकी बाते और कोई समझ नही सकता। बाकी दुनिया के लोग तो ऐसी ही बातो से अपना काम चलाते है।

अशोककुमार ने कहा–अब उन्हे मेरी बातो को भी समझना पड़ेगा।

कला की माँ ने नम्रता से उत्तर दिया—अच्छी बात है, पर पहले लड़की का विवाह कर लो, तब दुनिया को अपनी बाते समझाते रहना।

अशोककुमार—बातो से नहीं कार्यों से मै अपने सिद्धान्तो का प्रचार करना चाहता हूँ।

कला की माँ—बाते करना भी तो काम ही है।

अशोककुमार—खूब! तुम तो तार्किक बन रही हो। यह कम प्रसन्नता की बात नहीं है।

कला की माँ—मेरा तर्क काम दे तब तो ?

अशोककुमार—काम क्यों न देगा ? उमा को साथ लेकर व्रजेश की माँ से मिलो। वे अभी यहीं है और अगर तुम्हारा यह कहना ठीक है कि व्रजेश तड़ितबाला को चाहता है तो वह अपनी माँ को शायद ही वहाँ ले जावे।

'मै मिलकर क्या कहूँगी ?'

'यही कि वह अन्याय कर रहा है—अन्याय और अधर्म !'

७

तड़ितवाला सोलहवें वर्ष मे थी जब ब्रजेश से उसकी सब से पहली भेंट हुई थी। उसके पिता का देहान्त हुए तीन साल हो चुके थे। पिता की मृत्यु के पश्चात् वह दो वर्ष पढ़ सकी। तब आठवें दर्जे तक की पढ़ाई समाप्त कर एक सेवा-सघ मे सम्मिलित होने का अवसर पा गई। उसी की ओर से सेवा-समिति की ट्रेनिंग पाकर वह संघ के ही काम मे लग गई। ब्रजेश की उससे जिस तरह घनिष्ठता बढ़ी, उसे वह कभी भूल न सकती थी। किन्तु उस सघ मे काम करने से जो आत्मविश्वास उसमे आ गया था उसका असर भी अमिट था।

पिछले चार वर्षों मे ब्रजेश के संसर्ग का उस पर साधारण प्रभाव न पड़ा था। इसी कारण, बिना विशेष सोच-विचार किये, वह तार देकर झाँसी पहुँच गई थी। पर वहाँ उसने ब्रजेश का जैसा व्यवहार अपने साथ देखा उससे उसे आश्चर्य, दुःख और निराशा हुई थी। प्लेटफार्म पर मिलते ही ब्रजेश ने हँसकर कहा था—यहाँ तुम्हारे आने से मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। पर मेरी माँ एक सम्बन्धी के यहाँ चली गई हैं, इसलिए एक अच्छे होटल मे एक कमरा तुम्हारे लिए ठीक कर आया हूँ।

केवल तीन-चार दिन पहले ब्रजेश ने अपनी माँ के यहाँ आनन्द-पूर्वक रहने के बारे मे लिखा था। निकट भविष्य में उनके कहीं जाने की सम्भावना के विषय में एक शब्द भी उसमे न था। फिर भी तड़ित-वाला ने उनका विश्वास किया। वह बोली—चलिए, ठहरना कोई बुरी बात नहीं। मैं तो धर्मशाला में भी ठह

तब वह एक-एक घटना को सोचती और अनेक दिनो की अनेक बातो को अपना समर्थन करती पाती। इसी प्रकार सवेरा हो गया।

आठ बजे के करीब व्रजेश आये और इसकी ओर देखते ही बोले—क्या तबीयत ठीक नहीं है ?

अपने को खूब सँभालकर तडितबाला ने कहा—नहीं, तबीयत बिल्कुल ठीक है। आपकी बातो पर विचार करते-करते मैंने सारी रात बिना सोये ही काट दी है, इसी लिए शरीर पर कुछ असर होगा। पर वह मन की अवस्था को क्या प्रकट करेगा ?

'क्यो क्या बात है ? मेरे बारे मे तो इस तरह सोचने का कष्ट तुमने कभी न उठाया था—'

बात काटकर तड़ितबाला कह उठी—उसी भूल के लिए तो शायद जिन्दगी भर प्रायश्चित्त करना पडेगा। आपकी माँ यहाँ हैं, फिर आप मुझसे झूठ क्यो बोले कि वे यहाँ नही है।

व्रजेश—किसने कहा है कि वे यहाँ हैं ?

तड़ित०—क्या वे यहाँ नही हैं ?

व्रजेश—नहीं।

तड़ित०—मुझे अपने घर ले चलिए।

व्रजेश—मेरे घर कोई भी नहीं है। ऐसी दशा मे मै तुम्हें वहाँ ले जाऊँ तो लोग क्या कहेंगे ?

तड़ित०—क्या वहाँ नौकर-चाकर भी नहीं हैं ? न सही, आप बाहर खड़े रहिएगा, मैं देखकर चली आऊँगी। अड़ोस-पडोस के एक-दो आदमियो को अपने पास बुला लीजिएगा।

'चलो !' व्रजेश ने झुँझलाहट के ढङ्ग से कहा।

तडित०—ठहरिए, कब से आपकी माँ यहाँ नहीं हैं ?

व्रजेश—चलिए, अब मैं रास्ते मे सब बतलाऊँगा।

तड़ित०—चलिए।

'नहीं तो—वहाँ चलने के लिए तो वह सड़क है।' ताँगेवाले ने हाथ से दूसरी सडक दिखाकर कहा।

'खड़ा कर दो ताँगा।'

ताँगा खड़ा हो गया।

'आप मुझे कहाँ ले जा रहे हैं?' ब्रजेश से तड़ितवाला ने पूछा।

'स्टेशन'। ब्रजेश ने उत्तर दिया।

'अच्छी बात है, चलो।' उसने ताँगेवाले से कहा। तब ब्रजेश से बोली—शायद आप भूले न होंगे कि आपसे मिलने के समय तक मैं एक स्वयसेविका का काम करती थी। इस समय से मैं फिर वही हो गई हूँ और मैं आपसे यह कहना चाहती हूँ कि ऐसी सेविका का कोई तनिक भी अपमान नहीं कर सकता। आप जैसे बड़े लोग भी ऐसा नहीं कर सकते। मै स्टेशन से लौट आऊँगी और यहाँ अभी एक सप्ताह और रहूँगी।

'अच्छी बात है।' हँसकर ब्रजेश ने कहा।

इस हँसी ने और ब्रजेश की कुल मुख-मुद्रा ने तड़ितवाला को विशेष हैरानी में डाल दिया।

'क्या बात है? क्या ब्रजेशजी बिलकुल पतित व्यक्ति हैं? या मुझे उमा ने ही धोखा दिया? इनके मुख पर जैसा भाव है, इनके ओठो पर जैसी हँसी है, क्या वह सब मायापूर्ण है? इस भाव को उज्ज्वल, प्रेमपूर्ण भाव, इस हँसी को शुद्ध और पवित्र हँसी ही तो मैं अब तक समझती आ रही हूँ। क्या बात है? ....'

स्टेशन पर जाकर ताँगा खड़ा हो गया।

ताँगेवाले को पैसे देकर और तड़ितवाला से यह कह कि मै टिकट लेने जाता हूँ, वे उधर चले गये जिधर टिकट लेना था

थोड़ी देर मे वे वहाँ से लखनऊ तक के सेकंड ०

टिकट लाये।

'नही तो—वहाँ चलने के लिए तो वह सडक है।' ताँगेवाले ने हाथ से दूसरी सड़क दिखाकर कहा।

'खड़ा कर दो ताँगा।'

ताँगा खड़ा हो गया।

'आप मुझे कहाँ ले जा रहे है?' ब्रजेश से तड़ितबाला ने पूछा।

'स्टेशन'। ब्रजेश ने उत्तर दिया।

'अच्छी बात है, चलो।' उसने ताँगेवाले से कहा। फिर ब्रजेश से बोली—शायद आप भूले न होंगे कि आपसे मिलने के समय तक मैं एक स्वयसेविका का काम करती थी। इस समय से मैं फिर वही हो गई हूँ और मैं आपसे यह कहना चाहती हूँ कि ऐसी सेविका का कोई तनिक भी अपमान नहीं कर सकता। आप जैसे बड़े लोग भी ऐसा नहीं कर सकते। मैं स्टेशन से लौट आऊँगी और यहाँ अभी एक सप्ताह और रहूँगी।

'अच्छी बात है।' हँसकर ब्रजेश ने कहा।

इस हँसी ने और ब्रजेश की कुल मुख-मुद्रा ने तड़ितबाला को विशेष हैरानी मे डाल दिया।

'क्या बात है? क्या ब्रजेशजी बिलकुल पतित व्यक्ति हैं? या मुझे उमा ने ही धोखा दिया? इनके मुख पर जैसा भाव है, इनके ओठो पर जैसी हँसी है, क्या वह सब मायापूर्ण है? इस भाव को उज्ज्वल, प्रेमपूर्ण भाव, इस हँसी को शुद्ध और पवित्र हँसी ही तो मैं अब तक समझती आ रही हूँ। [illegible] बात है?......'

स्टेशन पर जाकर ताँगा खड़ा हो गया।

ताँगेवाले को पैसे देकर और तडितबाला से [illegible] टिकट लेने जाता हूँ, वे उधर चले गये जिधर टिकट [illegible]

थोडी देर मे वे वहाँ से लखनऊ तक के [illegible] टिकट लाये।

कुछ दे दे। माता से बढ़कर कौन इसका पात्र हो सकता है? मैं आपको मातृ-भक्ति से दूर कर दूँ तो मुझसे बढ़कर पतित व्यक्ति और कौन होगा?'

'क्या कहती हो तडित आज तुम! पिछले पाँच बरसो मे कितनी बार विवाद हो चुका है ऐसे विषयो पर? हमे अपना सर्वस्व किसी सिद्धान्त की रक्षा के लिए देना चाहिए—ऐसा—'

बात काटकर तडितबाला कह उठी—वह एक ही बात है। माता की आज्ञा मानना—माता को सुखी करना—अवश्य ही ऐसा सिद्धान्त या नियम है जिसके लिए हमे अपना सब कुछ दे देना चाहिए।

व्रजेश—और अगर तुम्हारी माँ तुम्हारा विवाह मेरे ही साथ करना चाहे तो?

तडित०—वे ऐसा चाहती हैं और चाहेगी, मै भी ऐसा चाहती हूँ और चाहूँगी, पर आपकी माँ को राजी करके ही—उनकी नापसन्दगी को हटा करके ही—विवाह हो सकता है।

व्रजेश—और अगर यह असम्भव हो?

तडित०—तो यह विवाह भी असम्भव होगा।

व्रजेश—अच्छी बात है, तब चलो तुम्हें लखनऊ पहुँचा दूँ।

तड़ित०—नहीं, मै आपकी माँ से मिलूँगी।

व्रजेश—क्या तुम यह भी नहीं जानती हो तड़ित, कि हिन्दू-जाति मे मै पैदा भर हुआ हूँ पर उस जाति का अर्थ मै कोई विशेष धर्म माननेवाली जाति नहीं मानता, बल्कि एक विशेष देश मे रहने-वाला व्यक्ति-समूह ही मानता हूँ। लेकिन मेरी माँ—

तड़ित०—यह मै जानती हूँ, पर मैं आपकी बात नहीं मानती। इस देश की जो एक विशेष संस्कृति है, यहाँ के लोगो की दृष्टि जिस समन्वय की ओर गई, जिस मध्य पथ को अनेक लोगो ने हमारे जीवन का व्यावहारिक मार्ग यहाँ बतलाया, सत्य और

८

रास्ते मे ताँगेवाले से तड़ितवाला ने कहा—मैं पहले चौक चलूँगी। वहाँ कुछ कपडे खरीदने है।

जब ताँगेवाला उसे चौक मे कपडो की दूकानों के सामने लाकर खड़ा हुआ तब भी वह कुछ देर ताँगे ही मे बैठी गम्भीरता-पूर्वक कुछ सोचती रही। इसके बाद हँसती हुई उस पर से उतरी और एक दूकान मे जाकर साडियाँ दिखाने की फरमाइश की।

दो बनारसी साड़ियाँ उसने खरीदीं और फिर ताँगे पर आकर उस होटल मे ले चलने को कहा जिसमे वह ठहरी थी। उसे फिर वापस आते देख होटल के मैनेजर को आश्चर्य हुआ।

'मै अभी दो-एक दिन और रहूँगी। वह कमरा खाली है न?' सुनकर उसने उत्तर दिया—'हाँ, खाली है। आप ख़ुशी से जाइए।'

तड़ितवाला उसमें चली गई।

थोडी देर में वह साड़ी पहने उस कमरे से निकली और उसे बन्द करके ताँगे पर जा बैठी। अगर उसने ताँगेवाले के सामने ही यह साड़ी न ली होती तो वह भी उसके इस परिवर्तित रूप मे उसे पहचान न पाता। जब ताँगा डाक्टर के मकान के सामने पहुँचा, उन्होने देखा कि कला और उमा एक ताँगे पर बैठी हुई आ रही हैं। तडित ने भी इसे देखा।

और तब आध घण्टे तक वहीं, घर के बाहर ही, उन लोगो से बातचीत होती रही। इसके बाद तडितवाला ताँगे पर बैठकर —'होटल होते हुए स्टेशन।' और उमा भी बिना भीतर गये वापस चली गईं।

८

रास्ते मे ताँगेवाले से तड़ितवाला ने कहा—मैं पहले चौक चलूँगी। वहाँ कुछ कपडे खरीदने हैं।

जब ताँगेवाला उसे चौक मे कपडो की दूकानो के सामने लाकर खडा हुआ तब भी वह कुछ देर ताँगे ही मे बैठी गम्भीरता-पूर्वक कुछ सोचती रही। इसके बाद हँसती हुई उस पर से उतरी और एक दूकान मे जाकर साडियाँ दिखाने की फरमाइश की।

दो बनारसी साड़ियाँ उसने खरीदी और फिर ताँगे पर आकर उस होटल मे ले चलने को कहा जिसमे वह ठहरी थी। उसे फिर वापस आते देख होटल के मैनेजर को आश्चर्य हुआ।

'मैं अभी दो-एक दिन और रहूँगी। वह कमरा खाली है न ?' सुनकर उसने उत्तर दिया—'हाँ, खाली है। आप ख़ुशी से जाइए।'

तड़ितवाला उसमें चली गई।

थोड़ी देर मे वह साडी पहने उस कमरे से निकली और उसे बन्द करके ताँगे पर जा बैठी। अगर उसने ताँगेवाले के सामने ही यह साड़ी न ली होती तो वह भी उसके इस परिवर्तित रूप मे उसे पहचान न पाता। जब ताँगा डाक्टर के मकान के सामने पहुँचा, उन्होने देखा कि कला और उमा एक ताँगे पर बैठी हुई आ रही हैं। तड़ित ने भी इसे देखा।

और तब आध घण्टे तक वहाँ, घर के बाहर ही, उन लोगों में बातचीत होती रही। इसके बाद तडितवाला ताँगे पर बैठकर [illegible]ली—'होटल होते हुए स्टेशन।' और कला तथा [illegible]न्ता के भीतर गये वापस चली गईं। वे तीनो ५८

मुसलमानो को मिलाकर बहुत पहले एक राष्ट्र बना देना चाहते थे तो आज .गुलाम होना तो दूर, अफ्रीका, अमेरिका और आस्ट्रेलिया आदि पर भी हिन्दुस्तान का ही राज्य होता। यह कैसे मुमकिन था कि हमारे शक्तिशाली देश के सामने कोई और देश ठहरता ?

'जो नहीं हुआ, उस पर अफसोस करने से अब कोई लाभ नही। उसके बारे मे तरह-तरह की कल्पनाएँ करना हवाई महल बनाना है।' ब्रजेश ने सिर हिलाकर कहा।

'जी नहीं, जो नही हुआ उस पर विचार करना होगा। अपनी भूलो को जानकर ही हम उन भूलो को दूर कर सकेंगे। यह मानने से काम नहीं चल सकता कि दुनिया मे सबसे बुद्धिमान्, नीतिज्ञ, धर्मध्वज, वैज्ञानिक आदि हमीं हैं; पर रहेंगे हम ऐसे ही बेबस, दीन, हीन और .गुलाम तथा क्षुद्र!' तड़ित के स्वर में उत्तेजना आ गई थी।

ब्रजेश ने कहा—जान पड़ता है, उमा के पति से भी तुम्हारी भेंट हुई है।

तड़ित०—नहीं तो, उनसे भेंट होने से क्या होता ?

ब्रजेश—वे एक राष्ट्रीय पत्र के सम्पादक हैं। वहाँ जोश की गैस बेहद भरी रहती है। वह छोटे से छोटे कर्मचारियों तक पर अपना प्रभाव डाला करती है। फिर उन पर तो डालना ही चाहिए। मैं दो बार उनके कारखाने में गया हूँ।

'आप क्यो गये थे ?' उत्सुकता के साथ तडित ने पूछा।

'यही तमाशा देखने।' ब्रजेश ने उत्तर दिया।

'क्या आप यह नहीं सोच पाते कि जो आपके लिए तमाशा है, पागलपन है और दयापूर्ण हँसी का सामान है, वही हमारे लिए सत्य है, जीवन है और एकमात्र पथ है।' तड़ित और भी उत्तेजित हो उठी थी।

ब्रजेश—यह सब क्या सीख आई हो तुम, तड़ित !

६

पाँच वर्ष बाद एक बार फिर लोगो ने देखा कि तडितबाला सेवा-संघ मे आई। उस समय के जो कार्यकर्ता इस समय मौजूद थे, उन्होंने उसे घेर लिया। इतना ही नही, सघ के मंत्री भी एक आवश्यक काम के बहाने वहाँ आ पहुँचे। आते ही उन्होने इन्हे देखकर कहा—क्या आपने गोर्की की प्रसिद्ध कहानी 'छब्बीस और एक' पढ़ी है? उसकी नायिका नीचे गिर जाती है और आप ऊपर उठ जाती है यही दोनो मे अन्तर है।

सब हँसने लगे। सबने यही समझा कि यह अन्तर झूठ-मूठ के लिए कह दिया गया है। असल मतलब यही है कि दोनो एक सी गिरती हैं। किन्तु उसी समय आँधी की तेज़ी से वहाँ एक युवक और आया और आते ही जोर से तड़ितबाला का दाहना हाथ पकड़कर बोला। आप यहाँ?

सब ने देखा वह जितेन्द्र है।

सब जानते थे कि सेवा संघ मे उससे बढ़कर सच्चा कार्यकर्ता और कोई नहीं, और यह भी जानते थे कि जितेन्द्र ही तड़ितबाला को पहले-पहल यहाँ लाया था।

इस समय जितेन्द्र के इस तरह प्रश्न करने पर तडित को आश्चर्य-पूर्ण सन्तोष हुआ और उसने हँसकर उत्तर दिया—हाँ, मैं जिस तरह एकाएक चली गई थी उसी तरह एकाएक फिर आ गई हूँ। आपने दो वर्ष पहले मुझे बुलाया था। मैं न आ सकी, यह मेरा दुर्भाग्य था।

मन्त्री ने कहा—क्या सचमुच आप यहाँ फिर काम करेंगी?

तब तड़ित की ओर फिरकर कहा—क्या आपका विवाह ब्रजेशजी के साथ नहीं हुआ ?

तड़ित का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—नहीं।

'यह बात यहाँ कब फैली थी ?'

मंत्री—अभी थोड़े ही दिनों में।

तड़ित०—बिल्कुल झूठ थी।

एक ने पूछा—थी या है ?

तड़ित०—झूठ थी और झूठ है।

से सम्पादक ने यह अनुरोध किया था कि वे भी ऐसी ही कविताओ को अपनी रचनाओ के लिए आदर्श बनावें।

इसके दूसरे दिन उन्हे सम्पादकजी का एक पत्र मिला जिसमें उनकी इस कविता के लिए शतश· धन्यवाद दिया गया था और उनसे यह प्रार्थना की गई थी कि अपनी कविताएँ उस पत्र में बराबर भेजने की कृपा करते रहे। आगामी कविता के साथ अपना एक चित्र भेजने को भी सम्पादक ने लिखा था।

व्रजेश ने इस पत्र के टुकडे-टुकड़े कर डाले। वे देर तक अपने आप हँसते रहे। किन्तु उसी पक्ष मे उन्होंने एक और कविता सम्पादक के पास भेजी। उसके साथ उनका एक फोटो भी था। इस कविता का शीर्षक था 'हेमाद्रि'। बीस पंक्तियो की इस रचना मे पॉच बार 'तड़ित' शब्द का प्रयोग किया गया था। सम्पादक ने इसे भी अपने पत्र के मुख्य पृष्ठ पर स्थान दिया।

उनकी पहली कविता जितेन्द्र ने तड़ितबाला को दिखलाई थी किन्तु यह कविता उसने नहीं दिखलाई—उसे दिखलाई आश्रम के मंत्री ने। तडितबाला ने यह भी देखा कि जहाँ-जहाँ तड़ित शब्द आया है उसके नीचे मंत्री ने लाल पेन्सिल से लाइन खींच दी है। उसी दिन तड़ित ने व्रजेश को एक पत्र लिखा—

प्रिय महोदय,

वन्दे०। आप जिस ढंग की कविताएँ बनाकर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करवा रहे हैं उन पर क्या आपने कभी गंभीरतापूर्वक कुछ सोचा भी है? मुझे सचमुच यह देखकर आश्चर्य होता है कि जो पत्र पत्रिकाएँ नैतिक बातों का एक तरह समर्थन करती हैं, और करना चाहती हैं, उनमें से भी कई एक को चित्रों और कविताओं को प्रकाशित करते समय नीतिशास्त्र का तनिक भी ध्यान नहीं रहता। यदि ऐसा

व्रजेश चुपचाप वापस चले आये।

उसी दिन उन्होंने कला के पिता को जवाबी तार भेजा—विवाह की तिथि की सूचना दीजिए। मैं झाँसी से ही विवाह करूँगा। माँ अभी वहीं रहेगी।

तार का उत्तर आया—खेद है, यह विवाह नहीं हो सकता। आपकी माँ सहमत नहीं होतीं।

व्रजेश ने माँ को लिखा—

पूज्य माँ,

प्रणाम। कला के पिता ने मुझे तार के ज़रिये सूचित किया है कि आप इस विवाह से सहमत नहीं। मैं समझता हूँ कि उन्होंने यह बिल्कुल झूठ लिखा है। स्वयं आपने कई बार मुझसे यह कहा था कि पिताजी की इच्छा के अनुसार आप कला के ही साथ मेरा विवाह करना चाहती हैं।

मैं समझता हूँ कि अभी आप वहीं रहें और वहीं से यह सब काम पूरा हो तो ठीक है। अगर आपको या उनको सचमुच कोई बाधा जान पड़ती हो तो कृपया तुरन्त सूचित कीजिए। अन्य कई लोग ऐसे सम्बन्ध के लिए प्रार्थी हैं। आपका उत्तर पाकर उनके बारे में लिखूँगा।

आपका आज्ञाकारी पुत्र
व्रजेश

व्रजेश की माँ यह पत्र पढकर बडे आश्चर्य मे आईं। उन्होंने उसी दिन उमा के यहाँ जाकर उसे यह पत्र दिखलाया और कहा—यह सच है कि मेरे अनेक रिश्तेदारो और घनिष्ठ सम्बन्धियों को भी ऐसा विवाह पसन्द नहीं पर मै तो इसे अनुचित नहीं समझती। कला के पिता ने झूठ-मूठ ऐसा क्यों लिखा ?

माँ—डाक्टर जाति ?

उमा—क्यो नही ? सुनार, लुहार, कुम्हार आदि सोने, लोहे, मिट्टी आदि की वस्तुओ के कार्य करने के कारण ही तो विशेष-विशेष जाति के है। इसी तरह डाक्टरी का काम करने से डाक्टरी जाति, वकालत का काम करने से वकील जाति क्यो न मानी जावे ?

माँ—जब मानी जाने लगेगी तब मैं भी मान लूँगी।

उमा—इसी तरह तो मानी जावेगी। कितने ही बड़े आदमी इस तरह के विवाह कर चुके है, आप भी उन्हीं मे शामिल हो जाइए।

माँ—नक्कू बननेवाले को जितनी मुसीबतें सहनी पड़ती हैं, मैं उनके लिए तैयार नहीं हूँ।

उमा—उसी की तो सदैव पूजा होती रहती है माँ! जब आप मे जाति-पाँति की संकीर्णता तोड देने का साहस है तो आप अधूरा काम क्यो करना चाहती है ?

माँ—कला तो तुम्हारी सखी है, उसके ही विवाह के लिए तुम्हे अधिक चिन्ता होनी चाहिए। पर तुम कर रही हो न जाने किस लडकी की सिफारिश।

व्रजेश की माँ का मुँह बनाना देखकर उमा को हँसी आई। पर उसे रोककर उसने कहा—'मैं किसी की सिफारिश आपसे नही कर रही हूँ। कला और तड़ितबाला, इन दोनो मे से कोई ऐसी नहीं है जिन्हे अपने लिए किसी की सिफारिश की जरूरत हो। वे भावी युग की रूप-रेखाएँ है। वह युग जिसमें पुरुषो के व्यर्थ घमडपूर्ण बौद्धिकवाद और मूर्खतापूर्ण सैनिकवाद का स्थान स्त्री का स्नेहवाद और पत्नी का प्रेमवाद ले लेगा।' उमा ने विश्वासपूर्ण ढंग से उत्तर दिया था और देखा कि उसकी बात का प्रभाव तुरन्त पड़ा।

११

न जाने क्या सोचकर तड़ितबाला के भाई ने भी अपना नाम बदल-कर किरणगुप्त रख लिया था। जब उसके मित्रो ने कहा कि गुप्त तो वनिया, वैश्य को कहते हैं तब उसने उत्तर दे दिया कि इतिहास-प्रसिद्ध चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त आदि दूकानदारी नही करते थे। और इस समय तो व्यवसायी लोग ही संसार पर वास्तविक शासन कर रहे है।

इन्ट्रेस की परीक्षा मे किरणगुप्त प्रथम श्रेणी मे प्रथम आया, अत: उसे सोलह रुपये मासिक वजीफा मिला और एक अच्छा ट्यूशन भी मिल गया। अब उसने तड़ितबाला के सेवासघ मे रहने के विरुद्ध सत्याग्रह करके उसे फिर मेडिकल कालेज मे डाक्टरी पढने जाने के लिए मजबूर कर दिया। तडित के पास भी पडोस की दो लड़कियाँ पढ़ने को आने लगी थीं। उनके घरवालो ने भी तड़ित से डाक्टरी पास कर लेने का अनुरोध किया। उसका पहला उपन्यास अब समाप्त होनेवाला था। जितेन्द्र ने वादा किया कि मैं उसे किसी प्रथम श्रेणी के प्रकाशक के यहाँ से बीस प्रतिशत रॉयल्टी पर निकलवा दूँगा और जहाँ तक संभव होगा कुछ रुपये पहले ही दिला दूँगा।

अपने उपन्यास मे तड़ितबाला ने स्वभावत: अपनी ही ऐसी एक नायिका की कल्पना की थी और ब्रजेश ऐसे एक नायक की। पर उसने अपने उपन्यास को सुखान्त बनाया था। उसने नायिका को डाक्टर बनाकर उसका विवाह नायक से करवा दिया था। उपन्यास समाप्त करके उसने एक लम्बी साँस खींचकर कहा था—

उज्ज्वल तो है ही। पर अंधकार धीरे-धीरे ही दूर होगा। उसके दूर करनेवालो में इस समय के समर्थ लेखकगण अवश्य रहेगे।

जितेन्द्र चुप रहा।

× × ×

बीस दिनो के भीतर ही उपन्यास प्रकाशित हो गया। उसके प्रारम्भ मे प्रकाशक के विशेष अनुरोध से तडितबाला का एक चित्र भी मौजूद था जिसमे वह धानी रंग की खद्दर की साड़ी पहने मेज के सामने कुरसी पर बैठी एक उपन्यास लिख रही थी।

इस रचना के प्रकाशन के ठीक सातवे दिन तड़ित को व्रजेश का एक लिफाफा मिला।

उसमे लिखा था—

तड़ित,

तुम्हारा उपन्यास पढ़ डाला। तुमने लिखते समय उसका एक पृष्ठ भी मुझे कभी न दिखाया था। मैं समझता था कि तुम उसमें अपनी ही बात लिख रही होगी। प्रायः सभी ऐसे लेखक यही करते हैं। तुमने भी यही किया है। मुझे भय था कि तुमने अपने उपन्यास में नायक के प्रति वैसा ही अन्याय किया होगा, जैसा तुम मेरे प्रति कर रही हो। पर तुम्हारे अन्तस्तल की सच्ची आवाज़ ने ऐसा नहीं करने दिया। यह देखकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई।

अब मुझे एक बार फिर यह आशा हो गई है कि जिस चित्र को तुमने इतने परिश्रम से और इतनी सचाई से खींचा है उसका तुम स्वयं ही अपमान न कर सकोगी। मैं अभी उत्तर की प्रतीक्षा न करूँगा। वही—व्रजेश

'तो व्रजेशजी ने यह समझा है कि इस उपन्यास की नायिका के अनुसार काम करने के लिए ही मैं फिर डाक्टरी पढ़ने लगी हूँ। खूब! बड़े समझदार हैं!'

ब्रजेश ने कहा—हम लोग ख़ुद ही ढूँढ़ लेंगे। तड़ित ने हँसकर कहा—हाँ, इतनी छोटी जगह मे वे जा ही कहाँ सकते हैं? चलिए।

और वह ब्रजेश के साथ चल खड़ी हुई!

कुछ देर दो मे से कोई कुछ न बोल सका। दोनो के हृदय मे कम्पन था, दोनो के गले भरे हुए से जान पड़ते थे। दोनो को मालूम होता था, आँसू अब रुक नहीं सकते।

उसी समय दोनों ने देखा, जितेन्द्र तेजी के साथ चौरस्ते पर आया और इन्हे देखते ही इनकी ओर मुड़ पडा। दोनों पकड़े गये चोरो की भाँति चुपचाप खड़े हो गये।

जितेन्द्र ने नमस्कार कर कहा—कहिए डाक्टर साहब, अपनी तड़ितबाला को उष.काल के वायुसेवन के समय किस विचार-पाश से आबद्ध कर लेने की इच्छा है?

ब्रजेश—मुझे तो कुछ सूझ ही न रहा था भाई जितेन्द्र। अब तुम मिल गये तो सफलता की आशा करना कदाचित् अनुचित न हो।

तीनो एक ओर चले।

जितेन्द्र ने कहा—सबसे अधिक वाक्-शूर आप मुझे ही मानते है क्या?

ब्रजेश—कोरे शब्दो के क्षेत्र में तो मैं आपको अपने से भी बढ़कर नहीं मानता। सबसे ऊँचा पद कैसे दे सकता हूँ?

तड़ित—इन्हे नहीं दे सकते तो आप स्वयं ही ले लीजिए। आपको तो आपत्ति नहीं है जितेन्द्र भाई!

जितेन्द्र—जब तुम इन्हे ऐसा सर्टीफिकेट दे रही हो, तब मुझे क्यो आपत्ति होगी?

तड़ित—आप मुझे तड़ित बेन कहा कीजिए। बेन गुजरात मे बहन को कहते हैं न?

व्रजेश ने कहा—हम लोग ख़ुद ही ढूँढ़ लेंगे। तड़ित ने हँसकर कहा—हाँ, इतनी छोटी जगह मे वे जा ही कहाँ सकते है? चलिए।

और वह व्रजेश के साथ चल खड़ी हुई।

कुछ देर दो मे से कोई कुछ न बोल सका। दोनो के हृदय मे कम्पन था, दोनो के गले भरे हुए से जान पड़ते थे। दोनो को मालूम होता था, आँसू अब रुक नही सकते।

उसी समय दोनो ने देखा, जितेन्द्र तेजी के साथ चौरस्ते पर आया और इन्हे देखते ही इनकी ओर मुड़ पड़ा। दोनों पकड़े गये चोरो की भाँति चुपचाप खड़े हो गये।

जितेन्द्र ने नमस्कार कर कहा—कहिए डाक्टर साहब, अपनी तड़ितबाला को उषःकाल के वायुसेवन के समय किस विचार-पाश से आबद्ध कर लेने की इच्छा है?

व्रजेश—मुझे तो कुछ सूझ ही न रहा था भाई जितेन्द्र। अब तुम मिल गये तो सफलता की आशा करना कदाचित् अनुचित न हो।

तीनो एक ओर चले।

जितेन्द्र ने कहा—सबसे अधिक वाक्-शूर आप मुझे ही मानते है क्या?

व्रजेश—कोरे शब्दो के क्षेत्र में तो मैं आपको अपने से भी बढ़कर नही मानता। सबसे ऊँचा पद कैसे दे सकता हूँ?

तड़ित—इन्हे नहीं दे सकते तो आप स्वयं ही ले लीजिए। आपको तो आपत्ति नही है जितेन्द्र भाई।

जितेन्द्र—जब तुम इन्हे ऐसा सर्टीफिकेट दे रही हो, तब मुझे क्यो आपत्ति होगी?

तड़ित—आप मुझे तड़ित बेन कहा कीजिए। बेन गुजरात मे बहन को कहते हैं न?

'मास्टर साहब', 'मास्टर साहब' कहकर पुकारने से ब्रजेश झल्ला उठा। इतने वर्षों तक उसने तडितवाला को पढाया था पर एक बार भी तड़ित ने उसे मास्टर साहब नहीं कहा था। सदैव मिस्टर ब्रजेश ही कहा करती थी। आज उसे क्या हो गया है? क्या वह स्पष्ट रूप से यह कहना चाहती है कि सिवा मास्टर साहब के और किसी रूप मे अब वह उस मिस्टर ब्रजेश को देख नहीं सकती? यदि वह डाक्टर ब्रजेश कहती या डाक्टर साहब ही कहती तो भी उसे इतना बुरा न लगता। पर मास्टर साहब क्या? क्या अब भी वह उसका मास्टर है? कहाँ मास्टर है?

उसने कहा—अच्छी बात है। मै यही चाहता हूँ कि आप मुझे मास्टर साहब न कहा कीजिए।

इसके पहले कि तड़ितवाला कुछ कहे, जितेन्द्र कह उठा—हाँ, तुम इन्हे डाक्टर साहब कहा करो।

तुरन्त तडित ने कहा—बहुत अच्छा।

'बहुत अच्छा!' यह कैसे स्वर में कहा गया, किस भाव के साथ, अपनी इच्छा से या वेबसी से? यह कैसे समझा जाता?

एक हल्की सी साँस खींचे बिना ब्रजेश न रह सका। हल्की होने पर भी वह तडित से छिपी नहीं रही।

उसका मुँह लाल हो गया।

उस मुख की ओर देखते ही डाक्टर ब्रजेश के मन का कुहरा छिन्न भिन्न हो गया और उसकी जगह आनन्द का सूर्य चमक उठा।

यदि वहाँ जितेन्द्र न होता तो वह तडित का हाथ पकड़कर कहता—चलो लौट चलें, जितेन्द्र तुम्हारा भाई है लेकिन मैं मास्टर साहब नहीं हूँ, बल्कि वही मिस्टर ब्रजेश हूँ, यह मैंने तुम्हारे हृदय के दर्पण मे देख लिया। यही देखने के लिए मैं आज आया था। इसके बिना मैं घोर अशान्ति-सागर में डूब रहा था।

तड़ित—आपने मेरे साथ कोई अन्याय नहीं किया। मैं भी आपके साथ अन्याय नही कर रही हूँ। दंड मैं आपको देना ही क्यो चाहूँगी ? आपने मुझे सदैव ऋणी ही बनाया है, आज भी आपने वैसा ही किया है। पर उसका वैसा बदला देना, जैसा कि आप कभी-कभी चाहते हैं, आपके प्रति घोर अन्याय करना होगा—और आपसे भी बढ़कर आपकी माता के प्रति और अनेक कलाओ मे दक्ष उस अपनी बहन कला के प्रति।

ब्रजेश—एक बार फिर विचार करो तड़ित। कितने सुन्दर भविष्य की तुम्हारे साथ मैने कल्पना की थी—सोचा था, मै डाक्टरी करूँगा और तुम भी डाक्टर बनोगी। हम दोनो अपने कुल-परिवार के लोगो के लिए सन्तोपदायक आर्थिक प्रबन्ध कर देंगे और तब सम्पूर्ण रूप से समाज-सेवा में सलग्न हो जावेगे। सोचा था, हम लोग ऐसे अच्छे ढग से काम करेंगे कि सहस्रो लोग इसी प्रकार के दम्पती बनना चाहेगे। हम यह दिखला देंगे कि निस्स्वार्थ कर्म-सम्पादन असम्भव नहीं, बल्कि सर्वथा व्यावहारिक है। ऐसे कर्म की कितनी अधिक आवश्यकता है तडित! पर जान पड़ता है वह सब सोचना-समझना स्वप्न ही हो जावेगा। तुम पर मैंने पूरा विश्वास किया था।

तड़ित—जो कुछ आपने सोचा-समझा था वही होने जा रहा है। आप निस्स्वार्थ कर्म मे रत होना चाहते थे और मुझे भी उसी क्षेत्र मे देखना चाहते थे। जहाँ तक मैं समझ सकती हूँ, यही होने जा रहा है।

ब्रजेश—पर निस्स्वार्थ कर्म तो बिलकुल भ्रमपूर्ण विचार है तड़ित! इसका अनुभव अब मै भली भाँति कर रहा हूँ।

'तो यह तो बहुत बड़ी बात हो गई—आपने सहज ही इतना महान् अनुभव प्राप्त कर लिया। और आप क्या चाहते हैं?'

ब्रजेश—क्या यही तुम्हारा कृतज्ञ-भाव है तड़ित!

१२

उमा को व्रजेश की माँ अपने यहाँ आने को कह गई थी। उमा गई और अपने साथ एक पत्र भी ले गई जिसकी प्रतिलिपि वह व्रजेश के पास भेजना ठीक समझती थी। यह पत्र उसने बड़े सोच-विचार के साथ और अपने पति गिरीशजी से पूर्ण परामर्श करने के बाद लिखा था। किन्तु व्रजेश की माँ को पत्र पसन्द न आया।

पत्र में लिखा था—

प्रिय व्रजेश,

अनेक आशीष। तुम्हारा पत्र पाकर मैं कुछ समझ न सकी कि तुमने ऐसी बात क्यों लिख दी कि तुम्हारा कला के साथ विवाह करना मुझे पसन्द नहीं, अतः मैं उमा के यहाँ गई। उसने बतलाया कि तुम्हारा एक तार कला के पिता के पास निश्चित तिथि जानने के लिए आया था, पर उत्तर में अशोककुमारजी ने लिख दिया है कि यह विवाह न होगा और असली कारण छिपाकर झूठमूठ यह बहाना कर दिया है कि मैं इससे सहमत नहीं हूँ। यह तो तुमसे छिपा नहीं है कि मेरे दोनों भाई तुम्हारा ऐसा विवाह नहीं चाहते। वे कट्टर जाँति-पाँतिवादी हैं, यानी न केवल इतना ही मानते हैं कि एक वर्ण या जाति के किसी व्यक्ति का उसी वर्ण या जाति के किसी व्यक्ति के साथ विवाह-सम्बन्ध हो बल्कि यह भी मानते हैं कि जाति की जिस

में मिलाकर आर्य से वास्तविक हिन्दू होकर अनेक अन्त-र्राष्ट्रीय जातियों को एक राष्ट्रीय शक्ति में परिणत कर चुके हैं। शाक्य, हूण आदि विदेशी लोगों को अपने में इस तरह सम्मिलित करने में उन्हे तनिक भी आपत्ति नहीं हुई। उसी तरह अब हिन्दू से हिन्दुस्तानी बन जाना चाहिए। उसमें यहाँ के सभी धर्मों और सभी जातियों के लोग, जो इस देश की सन्तान है या हो गये हैं, शामिल होने चाहिएँ। अतः मैं तो तुम्हारा विवाह अहिन्दू से भी करने को सहर्ष तैयार हूँ। अगर कला के पिता ने अनुचित घमंड में आकर तुम्हें ऐसा उत्तर दिया है तो मैं तो तुमसे यही कहती हूँ कि तुम अपने पिता की और अपनी माता की आज्ञा मानो, उनकी हार्दिक इच्छा पूर्ण करो, तुम उसी से अपना विवाह करो जो गर्व के साथ अनुभव करे कि तुम दोनों हिन्दुस्तानी हो—केवल हिन्दुस्तानी और कुछ नहीं। शेष आनन्द।

तुम्हारी माता।

यह पत्र पढ़कर व्रजेश की माँ ने कहा—क्या सचमुच कला के पिता को कोई अनुचित अभिमान है?

उमा—अभिमान अनुचित हो या उचित, यह तो स्पष्ट ही है कि वे कला का विवाह व्रजेशजी के साथ करना नही चाहते।

'क्यो ?'

'यह तो मै आपसे पहले ही बता चुकी हूँ—व्रजेशजी का एक अहिन्दू लडकी के प्रति प्रेम है जो डाक्टरी पढ़ रही है।'

'अगर ऐसा होता तो वह मुझे यह पत्र क्यो लिखता ?'

'वह लडकी भा उनसे विवाह न करना चाहती होगी।'

माँ का मुँह फिर तमतमा उठा, फिर भी उन्होने शांत भाव से कहा—क्यो ?

शुभ कार्य मे बाधा क्यो डालना चाहती हैं ? आपको
ा से आशीर्वाद ही देना चाहिए ।
मेरी समझ मे यह बिल्कुल नहीं आता कि तुम अपनी
हितैषिणी बनते हुए भी उसका अनिष्ट क्यो करना चाहती
कला अपना विवाह ब्रजेश से करना चाहती है तब उसकी
ं मे सहायता देना क्या तुम्हारा कर्तव्य नही है ?
—नही माँ ! मित्र या सखी का कर्तव्य अपने मित्र या
इच्छा की पूर्ति करना मै नहीं मानती । मै तो ऐसा
ूँ कि उनकी प्रत्येक अनुचित इच्छा का विरोध ही
व्य है ।
—इसे तुम अनुचित इच्छा क्यो कहती हो ?
—क्योकि ब्रजेशजी का तड़ित्बाला से पहले से प्रेम है ।
—फिर वह कला की ओर क्यो आकर्षित हुआ ?
—आपके सब प्रश्नो का उत्तर मैं निस्सकोच रूप से दे
ती । पर मुझे इस प्रश्न का उत्तर देना ही पडे तो मै
गी कि इसके अनेक कारण हो सकते हैं पर उन सबके
उनकी दुर्बलता ही दीखती है ।
—अगर मैं लखनऊ चलूँ तो तुम मेरे साथ चलोगी ?
ो लेकर ही जाना मुझे अच्छा नही लगता । अपने पति
वहाँ दो दिनो के लिए चलने को मेरी ओर से प्रार्थना कर
ो बहुत अच्छा हो ।
मा—अगर आपकी ऐसी इच्छा है तो हम दोनो आपके साथ
चलेगे, पर संभव है आपको अभी कुछ दिन ठहरना पड़े,
ि आजकल उन्हे अपने समाचारपत्र में बहुत काम करना
— है

तक रुकी रहूँगी । इतनी जल्दी

होकर इस शुभ कार्य मे बाधा क्यो डालना चाहती हैं ? आपको तो प्रसन्नता से आशीर्वाद ही देना चाहिए ।

माँ—मेरी समझ मे यह बिल्कुल नहीं आता कि तुम अपनी सखी की हितैषिणी बनते हुए भी उसका अनिष्ट क्यो करना चाहती हो ? जब कला अपना विवाह व्रजेश से करना चाहती है तब उसकी इच्छा-पूर्ति मे सहायता देना क्या तुम्हारा कर्तव्य नहीं है ?

उमा—नहीं माँ ! मित्र या सखी का कर्तव्य अपने मित्र या सखी की इच्छा की पूर्ति करना मै नहीं मानती । मै तो ऐसा मानती हूँ कि उनकी प्रत्येक अनुचित इच्छा का विरोध ही मेरा कर्तव्य है ।

माँ—इसे तुम अनुचित इच्छा क्यो कहती हो ?

उमा—क्योंकि व्रजेशजी का तड़ितबाला से पहले से प्रेम है ।

माँ—फिर वह कला की ओर क्यो आकर्षित हुआ ?

उमा—आपके सब प्रश्नो का उत्तर मै निस्सकोच रूप से दे नहीं सकती । पर मुझे इस प्रश्न का उत्तर देना ही पड़े तो मैं यही कहूँगी कि इसके अनेक कारण हो सकते है पर उन सबके मूल मे उनकी दुर्बलता ही दीखती है ।

माँ—अगर मै लखनऊ चलूँ तो तुम मेरे साथ चलोगी ? नौकर को लेकर ही जाना मुझे अच्छा नहीं लगता । अपने पति से भी वहाँ दो दिनो के लिए चलने को मेरी ओर से प्रार्थना कर सको तो बहुत अच्छा हो ।

उमा—अगर आपकी ऐसी इच्छा है तो हम दोनो आपके साथ जरूर चलेगे, पर सभव है आपको अभी कुछ दिन ठहरना पड़े, क्योकि आजकल उन्हे अपने समाचारपत्र मे बहुत काम करना पड रहा है ।

माँ—अच्छी बात है, मैं तब तक रुकी रहूँगी । इतनी जल्दी क्या है ?

तडित खड़ी थी—अकेली खड़ी थी। वह ताँगे से उतरी थी 'रोने के लिए' पर उसके उतरने पर जब ताँगा चला गया तब उसे आई हँसी। थोड़ी ही दूरी पर, एक पेड की सघन छाया के नीचे, एक भिखारिन बैठी थी। उसी के पास वह चली गई। जेब मे हाथ डालकर उसने देखा दो रुपये पडे हुए है, पैसा एक भी नही है। दोनो रुपये उसने निकाल लिये। उनमे से एक रुपया उसने भिखारिन के हाथ पर रख दिया। वह आश्चर्यपूर्ण प्रशसा के भाव के साथ तड़ित की ओर देखने लगी। पर मुँह से एक शब्द भी नही कहा।

तड़ितबाला ने देखा, भिखारिन के उस भाव के पीछे बहुत कुछ छिपा हुआ है। वह सिहर उठी। और तब उसने दूसरा रुपया भी उसके हाथ पर रख दिया। भिखारिन भय-भीत हो उठी। उसने पूछा—'तुम मुझसे क्या चाहती हो?' उसके स्वर से भय फूटा पड़ता था। उसके शरीर के प्रत्येक अङ्ग की भी ऐसी ही दुर्दशा हो गई थी।

तड़ितबाला उसके पास पृथ्वी पर बैठ गई और बोली—मैंने आज सब कुछ पा लिया है, अब कुछ पाना शेष नही है। तुम भूखी जान पडती हो। मेरे यहाँ चलकर इस समय खाना खाओगी?

भिखारिन उठकर इस तरह खडी हो गई मानो तुरन्त भागने-वाली हो। उसने कहा—मेरी उम्र पचास के ऊपर पहुँच गई है। क्या अब भी शैतान मेरे पीछे इस बुरी तरह पड़ा हुआ है? तुमने सब कुछ पा लिया है तो मुझ भिखारिन पर तुम्हे दया क्यो नही आती? क्या अब भी मैं अद्भुत सुन्दरी दिखलाई देती हूँ?

१४

अभी व्रजेश अपनी माँ और अपने मेहमानों से वातचीत कर ही रहे थे कि जितेन्द्र ने उनके घर के बाहर पहुँचकर उन्हे आवाज दी। सब बाते संक्षेप मे सुनकर व्रजेश 'आवश्यक' सामान लेने अस्पताल चले गये और थोड़ी ही देर मे एक मोटर मे वापस आकर बोले—चलिए।

भिखारिन के पेट से जहर निकाल लिया गया, पर उसका कुछ न कुछ प्रभाव शेष रह ही गया। उसे तड़ित और जितेन्द्र के साथ वे अस्पताल मे लिवा लाये। वहाँ आने पर उन्होने तड़ित से कहा—आज घर लौटने पर मैने देखा कि माँ, उमा और गिरीश यहाँ आये हैं। मै जितेन्द्र के आने तक उन्ही से बाते कर रहा था।

तडित०—कला देवी नहीं आई ?

व्रजेश—ऐसी देवी ऐसे देवता के पास नही आया-जाया करती। उमा से मिलोगी ?

'क्यों ? क्या आप चाहते है कि मैं मिलूँ ? वे लोग यही कहने आई हैं कि कला के साथ विवाह करना ही आपके लिए, और आपके समाज के लिए, शोभाप्रद और गौरवप्रद होगा।'

'वे लोग कौन ? क्या वे सब लोग सहमत है ? यह पत्र देखो तब तुम कुछ समझ सकोगी।'

तड़ित ने पत्र पढ़ लिया। यह उसी पत्र की प्रतिलिपि थी जिसे उमा व्रजेश के पास उसकी माँ की ओर से भेजवाना चाहती थी।

उसे पढ़कर तडितबाला ने कहा—क्या आप किसी तरह कला देवी को यहाँ नही बुला सकते ?

'अच्छा, तो मैं उमा को लिवा लाता हूँ।' कहकर वे बाहर चले गये।

थोड़ी देर में मोटर लौटी। तड़ितबाला ने देखा, दो स्त्रियाँ आ रही है। वह उठ खड़ी हुई। उमा ने उसका हाथ पकड़-कर कहा—'नमस्ते'। उमा से नमस्ते कहकर तडितबाला ने अपना सिर माँ के चरणो पर रख दिया।

माँ आश्चर्य से अभिभूत रह गई। उन्होंने तड़ित का सिर उठाकर उसे अपने हृदय से लगा लिया और उसकी पीठ पर हाथ फेरा। साथ ही वे हँसकर बोलीं—बेटी, मै तुम्हे यह आशीर्वाद देती हूँ कि ईश्वर तुम्हारी सब इच्छाएँ पूरी करे।

तडित ने कहा—मेरी इच्छा पूरी कर देना तो आपके ही हाथ मे है। ब्रजेशजी कला देवी से विवाह करके सुखी होगे, आप भी उससे सुखी होगी, आप लोगो को समाज का उतना अधिक विरोध सहन न करना पड़ेगा। आप उनका विवाह कला देवी से कर दीजिए। इससे मुझे भी प्रसन्नता होगी।

तड़ित को माँ के चरणो पर सिर रखते देखकर उमा को आश्चर्य हुआ था और विरक्ति भी। उसने मन ही मन कहा था—नीच तड़ित स्वार्थवश इतना नीचे गिरने को तैयार हो गई। किसी के पैरो पर सिर रखना वह कभी उचित न समझती होगी और आज उसने वही किया। माँ को जाल मे फँसाने के लिए ऐसा ग्लानिकारक उपाय ? छि: !

पर अब तड़ित की बात सुन वह भौंचक सी उसकी ओर देखने लगी और उसके मन मे आया कि मै स्वयं अपना सिर तड़ितबाला के चरणो पर झुका दूँ। ऐसा अद्भुत त्याग। ऐसा उच्च प्रेम ! उमा के नेत्र सजल हो गये।

स्वयं माँ पर इसके बिलकुल प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। जब तड़ित-बाला ने उनके चरणो पर सिर झुकाया, वे पुलकित हो गईं। कला ने

१५

जितेन्द्र के माँ-बाप न थे, केवल एक बडा भाई था। वह रेलवे सम्बन्धी किसी पद पर तीन सौ रुपये महीने पाता था। स्वामी रामतीर्थ, परमहंस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, श्री कृष्ण-मूर्ति, डाक्टर भगवानदास, सर राधाकृष्णन् आदि के व्याख्यानो और लेखो का वह विशेष पाठक था। वेदांत के योगवाशिष्ठ, ज्ञानेश्वरी, उपनिषद् आदि का अध्ययन भी वह करता था। जान पड़ता है, इन्हीं कारणो से अब तक उसने अपना विवाह न किया था और इन्हीं कारणो से जब जितेन्द्र ने सेवा-संघ में काम करना चाहा तब उसने उसे रोका नहीं और उसके विवाह के प्रति अनिच्छा दिखाने पर विवाह के लिए कभी जोर नहीं दिया। इस भाई का नाम उपेन्द्र था। उसकी अवस्था तीस-इकतीस की थी। जितेन्द्र उससे तीन वर्ष छोटा था।

उपेन्द्र पाँच वर्ष से झाँसी के बडे कार्य्यालय में काम करता था, पर जितेन्द्र वहाँ कभी नहीं गया। प्रतिवर्ष दो-तीन बार उपेन्द्र ही लखनऊ आता और कुछ दिनो वहाँ रहकर चला जाता था। लखनऊ की रामतीर्थ-प्रकाशन-समिति से उसे विशेष प्रेम था और वहाँ की प्रकाशित पुस्तको का वह ग्राहक ही नहीं, प्रचारक भी था। किन्तु स्वामी राम के लेखो मे भी उसे वे सबसे अधिक प्रिय थे जिनमें इस देश की दुर्दशा का वर्णन था और इसके नव जीवन के लिए प्रयत्न किये गये थे। ऐसे ही अनेक लेख वह विवेकानन्दजी आदि के भी असाधारण रुचि से पढ़ता था। किन्तु यहीं तक—इसके आगे स्वयं कभी ऐसे किसी कार्यक्षेत्र में आने

उपेन्द्र—समाज को तितर-बितर कर देने से जो हानियाँ होती हैं वे ही होगी।

जितेन्द्र—जिन देशो मे जाँति-पाँति नहीं वहाँ का समाज हमारे देश के समाजो से कहीं अच्छे ढंग से कैसे चल रहा है ?

जितेन्द्र के स्वर में कटुता थी।

उपेन्द्र ने शांत भाव से कहा—उनके यहाँ एक ही वर्ण है—शूद्रवर्ण—इसी लिए उनका समाज चलता जाता है।

जितेन्द्र—यह क्या कहते हैं आप ? हमारे यहाँ के विद्वान् पश्चिमी उपाधियों के बिना विद्वान् ही नहीं माने जाते। इसी तरह हमारे यहाँ के युद्ध-कुशल, व्यापार-कुशल आदि लोगो की भी दुर्दशा है, तब भी आप वहाँ केवल शूद्रों का निवास समझते है और अपने यहाँ श्रेष्ठतर लोगो का।

उपेन्द्र ने कहा—इतने उत्तेजित न हो। हमने आत्मविश्वास खो दिया है, इसी लिए हमारी ऐसी दुर्गति है, नहीं तो अन्य सब लोग हमसे बहुत कुछ सीख सकते हैं।

जितेन्द्र—पराजित की या पतित की झूठी ऐंठ ही उसकी दुर्गति को बनाये रखती है, बल्कि उसे और भी गिरा देती है। क्या इतनी सीखों के बाद भी हमें मूर्खों के कल्पना-लोक में ही विचरण करते रहना चाहिए ? आत्म-विश्वास से ही हम बेतार के तार, बिजली के सहस्रो यन्त्र और हवाई जहाज आदि सामान तैयार करने लगेंगे ? क्या हमे किसी देश से कुछ भी न सीखना पड़ेगा ?

उपेन्द्र—यह मेरा मतलब नहीं है। ये चीजें सीखनी पड़ेंगी पर ये वैसा ही है जैसे बच्चो के खिलौने। पश्चिम को पूर्व से अब भी बहुत कुछ सीखना है।

जितेन्द्र—यह बहुत बड़ा और बिलकुल झूठा अभिमान है दादा! जिन्हें आप बच्चों के खिलौने कहते हैं उनके लिए न जाने कितने विद्वानों को न जाने कितने क्लेशों का सामना करना पड़ा है—

उपेन्द्र—यह और अच्छी बात है, तुम यही करना। ऐसी प्रार्थना करने कब जाओगे ?

जितेन्द्र—आज ही जाने का विचार है।

उपेन्द्र—अगर मै बातचीत करूँ तो ?

जितेन्द्र—आप अपना विवाह कर ले तब तो मुझे और भी प्रसन्नता होगी।

उपेन्द्र—पागल हो गये हो क्या तुम ? मै अपने लिए नही तुम्हारे लिए ही बात करना चाहता हूँ। पर इस लड़की से तुम्हारा प्रेम नही है, यह स्पष्ट है। तुम केवल यह चाहते हो कि उससे कोई विवाह कर ले। क्या इसी लिए तुम स्वयं विवाह करने जा रहे हो—यही बात है ?

जितेन्द्र—हॉ और नही भी।

उपेन्द्र—क्या बात है, स्पष्ट बतलाओ।

जितेन्द्र—आपने कला को देखा है ?

उपेन्द्र—नही।

जितेन्द्र—उसके बारे मे आप कुछ जानते हैं ?

उपेन्द्र—बहुत थोड़ा। इतना ही कि कला नाम होने से या स्वभावत: उसने कई कलाओ मे अच्छी योग्यता प्राप्त करने का पूरा प्रयत्न किया है और बहुत कुछ सफलता भी पाई है।

जितेन्द्र—एक ही कला मे सफलता पाना कठिन है, कई कलाओ की तो बात ही क्या। आपने कभी उसकी कोई कलापूर्ण कृति देखी है ?

उपेन्द्र—हॉं, दो-चार चित्र, दो-चार कविताएँ और एक-दो गीत।

जितेन्द्र—किसने दिखाये ?

उपेन्द्र—उसके पिता ने।

जितेन्द्र—क्यो ?

उपेन्द्र—वे चाहते थे कि मै भी उन्हें वर खोजने में मदद दूँ।

उपेन्द्र—यह और अच्छी बात है, तुम यही करना। ऐसी प्रार्थना करने कब जाओगे?

जितेन्द्र—आज ही जाने का विचार है।

उपेन्द्र—अगर मै बातचीत करूँ तो?

जितेन्द्र—आप अपना विवाह कर लें तब तो मुझे और भी प्रसन्नता होगी।

उपेन्द्र—पागल हो गये हो क्या तुम? मै अपने लिए नहीं तुम्हारे लिए ही बात करना चाहता हूँ। पर इस लड़की से तुम्हारा प्रेम नहीं है, यह स्पष्ट है। तुम केवल यह चाहते हो कि उससे कोई विवाह कर ले। क्या इसी लिए तुम स्वयं विवाह करने जा रहे हो—यही बात है?

जितेन्द्र—हाँ और नहीं भी।

उपेन्द्र—क्या बात है, स्पष्ट बतलाओ।

जितेन्द्र—आपने कला को देखा है?

उपेन्द्र—नहीं।

जितेन्द्र—उसके बारे में आप कुछ जानते हैं?

उपेन्द्र—बहुत थोडा। इतना ही कि कला नाम होने से या स्वभावत उसने कई कलाओ मे अच्छी योग्यता प्राप्त करने का पूरा प्रयत्न किया है और बहुत कुछ सफलता भी पाई है।

जितेन्द्र—एक ही कला में सफलता पाना कठिन है, कई कलाओं की तो बात ही क्या! आपने कभी उसकी कोई कलापूर्ण कृति देखी है?

उपेन्द्र—हाँ, दो-चार चित्र, दो-चार कविताएँ और एक-दो गीत।

जितेन्द्र—किसने दिखाये?

उपेन्द्र—उसके पिता ने।

जितेन्द्र—क्यों?

उपेन्द्र—वे चाहते थे कि मैं भी उन्हे वर खोजने में

उपेन्द्र—तुमने उसका अध्ययन किया है ?

जितेन्द्र—आप तो जानते है, मै कैसे कर्मवाद मे विश्वास करता हूँ। जब मेरे देश मे पराधीनता की ज्वाला जल रही है तब मै उच्च विज्ञान और दर्शनशास्त्रो के पढ़ने मे लगने को कर्तव्य से जी चुराना और स्वदेश के प्रति विद्रोह करना ही मानता हूँ।

उपेन्द्र—तब विवाह क्यो करना चाहते हो ?

जितेन्द्र—मैने सुना है कि कला मे कवित्वशक्ति है। मुझमे कर्मशक्ति है। कविता नायक की अपेक्षा करती है और नायक को कविता से उत्साह मिलता है। हम दोनो मिलकर कुछ वास्तविक कार्य कर सकेंगे।

'वह वास्तविक कार्य गृहस्थी चलाना और बच्चो की सृष्टि करना होगा।' उपेन्द्र ने गंभीर स्वर में कहा।

'वह वास्तविक कार्य्य होगा स्वदेश-सेवा मे नवीन जीवन का संचार और पशुओ तथा राक्षसो के स्थान पर मनुष्यो और देवताओं की सृष्टि।' वैसे ही गंभीर ढग से जितेन्द्र ने उत्तर दिया।

'ऐसे अहंकार के आधार पर कोई बडा काम आज तक हुआ है ?' उपेन्द्र ने एक साँस खींचकर पूछा।

जितेन्द्र ने कहा—ऐसे ही महान् उद्देश को सामने रखकर सब महान् कार्य सम्पादित हुए है।

सबसे भयंकर पतन वही है जो उच्चता के नाम से होता है। तुम गिरने जा रहे हो। गिरना अस्वाभाविक नहीं है, पर उसे उच्चता मत कहो।

जितेन्द्र हँस पडा—भाई साहब, गिरना अस्वाभाविक नहीं तो पतन को उच्चता कहना भी अस्वाभाविक नहीं। मुझे इस पथ पर जाने दीजिए, आप मेरी सहायता कीजिए।

'बात क्या है जितेन्द्र, सच कहो।'

'सच क्या कहूँ ?'

उपेन्द्र—तुमने उसका अध्ययन किया है ?

जितेन्द्र—आप तो जानते है, मै कैसे कर्मवाद मे विश्वास करता हूँ। जब मेरे देश मे पराधीनता की ज्वाला जल रही है तब मैं उच्च विज्ञान और दर्शनशास्त्रो के पढ़ने मे लगने को कर्तव्य से जी चुराना और स्वदेश के प्रति विद्रोह करना ही मानता हूँ।

उपेन्द्र—तब विवाह क्यो करना चाहते हो ?

जितेन्द्र—मैने सुना है कि कला मे कवित्वशक्ति है। मुझमें कर्मशक्ति है। कविता नायक की अपेक्षा करती है और नायक को कविता से उत्साह मिलता है। हम दोनो मिलकर कुछ वास्तविक कार्य कर सकेगे।

'वह वास्तविक कार्य गृहस्थी चलाना और बच्चो की सृष्टि करना होगा।' उपेन्द्र ने गंभीर स्वर मे कहा।

'वह वास्तविक कार्य्य होगा स्वदेश-सेवा में नवीन जीवन का सचार और पशुओ तथा राक्षसो के स्थान पर मनुष्यो और देवताओ की सृष्टि।' वैसे ही गंभीर ढंग से जितेन्द्र ने उत्तर दिया।

'ऐसे अहंकार के आधार पर कोई बडा काम आज तक हुआ है ?' उपेन्द्र ने एक साँस खींचकर पूछा।

जितेन्द्र ने कहा—ऐसे ही महान् उद्देश को सामने रखकर सब महान् कार्य सम्पादित हुए हैं।

सबसे भयकर पतन वही है जो उच्चता के नाम से होता है। तुम गिरने जा रहे हो। गिरना अस्वाभाविक नहीं है, पर उसे उच्चता मत कहो।

जितेन्द्र हँस पडा—भाई साहब, गिरना अस्वाभाविक नहीं तो पतन को उच्चता कहना भी अस्वाभाविक नहीं। मुझे इस पथ पर जाने दीजिए, आप मेरी सहायता कीजिए।

'बात क्या है जितेन्द्र, सच कहो।'

'सच क्या कहूँ ?'

हो गई है।' उसने अब तड़ितवाला के बारे मे सब कुछ बतला-कर कहा—क्या आत्मा का साक्षात्कार करके तब मैं कला से विवाह करूँ ?

उपेन्द्र—साक्षात्कार हो जाने पर सब कुछ मिल जावेगा। क्षुद्र सुख की खोज या उसकी ओर प्रवृत्ति तभी तक रहती है, जब तक वास्तविक आनन्द का प्रत्यक्षीकरण नहीं होता। समुद्र को छोड़कर कीचड़ से भरी तलैयो की ओर जाने से क्या लाभ ?

जितेन्द्र को यह उपदेश बिलकुल असामयिक और भोडा जान पडा, फिर भी उसने शान्त और स्वाभाविक ढङ्ग से कहा—प्यास समुद्र के पानी से नहीं बुझती। हम असीम और अनन्त का ध्यान कैसे कर सकते हैं ? हमारा तो अपने तालाब और अपने निकट की नदी से ही काम चलेगा। इसी तरह ससीम और शान्त की ओर जाकर ही हम परितृप्ति और शान्ति पा सकेंगे।

उपेन्द्र चुप सा रहा।

कहा—आप लोग जाते हैं और आपने मेरी माँ को बहुत कुछ राजी कर लिया है पर वे उस प्रबल आन्दोलन से डरती हैं जो मेरे अहिन्दू स्त्री से विवाह कर लेने पर उठ खडा होगा, इसलिए अगर कला के पिता अब भी चाहे तो आप कह दीजिएगा कि मुझे या मेरी माँ किसी को भी मेरा विवाह कला के साथ हो जाने मे तनिक भी आपत्ति नही है।

कला—बडी उदारता है! तुमने क्या कहा?

उमा—यही कि जाति-पाँति तोड़कर विवाह करने से तो आन्दोलन होगा ही। जाति से बहिष्कृत दोनो दशाओ मे किये जा सकते हैं। पर वे बोले कि नहीं, इस दशा मे जातिवाले अधिकांश लोग हमारे साथ रहेगे।

कला—तब?

उमा—मैंने कह दिया कि आपका खयाल ठीक नही। पर उन्होने कुछ उदाहरण देने चाहे और यह समझाना चाहा कि मेरा ही मत ठीक नही है।

कला—तुमने यह नहीं कहा कि ऐसी नौकरी स्वीकार करके और कुछ करना-धरना तो है ही नही, इस छोटे से सामाजिक सुधार के विरुद्ध आन्दोलन का सामना करने का भी जिसमे साहस नही है, उसे अपना विवाह करना ही न चाहिए।

उमा—ऐसा मै पहले कई बार कह चुकी थी। इसके उत्तर मे वही झूठी मातृ-भक्ति का बहाना है। जब मैने कहा कि 'माँ स्वयं देख लेंगी कि इस सुधार मे हाथ बँटाने का श्रेय पाना कितनी पुण्य की बात हुई है।' तब वे मुँह बनाकर चुप रह गये।

कला—कैसा मुँह बनाया था?

उमा—जैसा तुम बना रही हो। अब जितेन्द्र का हाल तो बतलाओ। ये महाशय क्या कहते है?

कला—यही जानने को तो तुम्हे बुलाया है।

उमा—मैं ही उनका रहस्य समझ सकती हूँ क्या?

करते हैं। भाई को भी इसी तरह का बनाना चाहते हैं। पर उन पर उल्टा ही प्रभाव पड़ता है। और वह फिर हँसी।

उमा—तुम क्या चाहती हो?

कला—इसका क्या अर्थ? तुम क्या जानना चाहती हो?

उमा—हमें जीवन मे आवश्यक वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए धन, प्रतिष्ठा, पति और अनुचर चाहिए। इन सब साधनों से शरीर के लिए भोजन और वस्त्र आदि, दिमाग़ के लिए पुस्तकें, कला तथा विज्ञान की वस्तुएँ और अपत्य-स्नेह की पूर्ति के लिए सन्तानें प्राप्त होती हैं। अनुचर लोग हमारी यश-वृद्धि में सहायक होते हैं। आनन्द का ठीक ढंग से उपभोग और ज्ञान का प्रचार—यही मानव-जीवन की विशेषता है। या तुम्हें और कुछ चाहिए?

कला—अब तक तो यहाँ के अधिकांश विद्वान् लोग पति को ऐसा साधन नहीं मानते। तुलसीदासजी—

उमा ने कला की बात काटकर कहा—तुलसीदासजी की बात करके मुझे या अपने आपको धोखा न दो। उनकी दृष्टि है आत्म-समर्पण की—पति चाहे जैसा हो, अशक्त हो, व्यभिचारी हो, बद-माश हो, सब प्रकार स्त्री के लिए पूज्य ही है। इसी तरह पिता के वचन कैसे ही हों, उनमें उचित-अनुचित का प्रश्न उठाना ही वर्जित है। ब्राह्मण जाति और साकार ईश्वर के प्रति भी उनकी ऐसी ही आज्ञा है। कर सक्ती हो इसके अनुसार तुम?

'इसके अनुसार तो इस समय न कोई करता है, न कर सक्ता है।' कला ने एक फोटो की ओर देखते हुए उत्तर दिया। तब बोली—यह फोटो यहाँ कौन लगा गया है?

उमा ने हँसकर कहा—मुझसे उड़ती क्यों हो? यह तो जितेन्द्र का फोटो है।

कला—इसमें उड़ने की कौन सी बात?

करते हैं। भाई को भी इसी तरह का बनाना चाहते हैं। पर उन पर उल्टा ही प्रभाव पडता है। और वह फिर हॅसी।

उमा—तुम क्या चाहती हो?

कला—इसका क्या अर्थ? तुम क्या जानना चाहती हो?

उमा—हमे जीवन मे आवश्यक वस्तुओ को प्राप्त करने के लिए धन, प्रतिष्ठा, पति और अनुचर चाहिए। इन सब साधनो से शरीर के लिए भोजन और वस्त्र आदि, दिमाग के लिए पुस्तके, कला तथा विज्ञान की वस्तुएँ और अपत्य-स्नेह की पूर्ति के लिए सन्ताने प्राप्त होती है। अनुचर लोग हमारी यश-वृद्धि मे सहायक होते है। आनन्द का ठीक ढग से उपभोग और ज्ञान का प्रचार—यही मानव-जीवन की विशेषता है। या तुम्हे और कुछ चाहिए?

कला—अब तक तो यहाँ के अधिकाश विद्वान् लोग पति को ऐसा साधन नहीं मानते। तुलसीदासजी—

उमा ने कला की बात काटकर कहा—तुलसीदासजी की बात करके मुझे या अपने आपको धोखा न दो। उनकी दृष्टि है आत्म-समर्पण की—पति चाहे जैसा हो, अशक्त हो, व्यभिचारी हो, बद-माश हो, सब प्रकार स्त्री के लिए पूज्य ही है। इसी तरह पिता के वचन कैसे ही हो, उनमे उचित-अनुचित का प्रश्न उठाना ही वर्जित है। ब्राह्मण जाति और साकार ईश्वर के प्रति भी उनकी ऐसी ही आज्ञा है। कर सकती हो इसके अनुसार तुम?

'इसके अनुसार तो इस समय न कोई करता है, न कर सकता है।' कला ने एक फोटो की ओर देखते हुए उत्तर दिया। तब बोली—यह फोटो यहाँ कौन लगा गया है?

उमा ने हँसकर कहा—मुझसे उडती क्यो हो? यह तो जितेन्द्र का फोटो है।

कला—इसमें उड़न की कौन सी बात?

उमा—अच्छा, ठीक बताओ। तुम इनमें से किसी के साथ अपना विवाह करना चाहती हो या नहीं ?

'नहीं।'

'क्यों ?'

कला—तुम जितेन्द्र से यह कहना कि वे अपने नाम की तो लाज रखें और ब्रजेश को लिख देना कि सीधी तरह तड़ितवाला से विवाह कर ले, नहीं तो फिर वह भी किसी तरह हाथ न आयेगी।

उमा—और तुम क्या करोगी ?

कला—मैं वही करूँगी जो तुमने जिन्दगी के लिए जरूरी बतलाया है—कला द्वारा आनन्द की प्राप्ति और ज्ञान द्वारा विवाह-बन्धन, जाति-बन्धन, आधुनिक धर्म-बन्धन आदि के विरुद्ध प्रचार।

उमा—उससे माँ-बाप की कैसी निन्दा होगी, यह जानती हो ?

कला—पहले होगी। फिर मेरी विद्वत्ता और मेरे चरित्र-बल की धाक जम जाने पर, तथा मेरे कुछ वास्तविक सफलता पा लेने पर उनका यश ही फैलेगा।

उमा—यह है अस्वाभाविक महत्त्वाकांक्षा। जान पड़ता है, तुम भी आजकल की गृहस्थ हिन्दू-सती को वेश्या से बदतर समझने-वाले बुद्धिहीन लोगों की साथिन हो रही हो।

उमा का स्वर विषाद से भरा था।

कला—मैं ऐसी नहीं हूँ। वेश्याओं के बारे में मैंने जो कुछ सुना है, उससे मैं जानती हूँ कि उन्हें नाम-मात्र की भी स्वतन्त्रता नहीं होती। वे हिन्दू घर की स्त्रियों की अवस्था में आ जाना स्वर्ग में आ जाना समझेंगी। हिन्दू-घर की स्त्री तो राजरानी होती है, यही मैं मानती हूँ, क्योंकि यही मैंने देखा है। फिर भी मैं इस समय वही पथ कल्याणकारक समझती हूँ, जिस पर मैं जाना चाहती हूँ।

खोलकर रत्न-राशि को बटोर नहीं चुकी हो, हाँ तुम्हें कुंजी मिल गई है और तुमने रत्न-राशि देख ली है।

कला—पर तुम तो कहती हो कि मैं उस सुपथ पर जाऊँ ही नहीं, उस ताले को खोलूँ ही नहीं, उस रत्न-राशि को बटोरने के लिए प्रयत्न ही न करूँ।

उमा—इसका पथ अब दूसरा है। यह गृहस्थ-पथ ही है। गृहस्थी का भार लेकर ज्ञान को व्यावहारिक रूप में प्राप्त करो और तब स्वानुभव के बल पर दूसरों को भी शक्तिशाली बनाओ।

कला—नहीं, मैं विवाह न करूँगी।

उमा—उसका कारण केवल यही हो सकता है कि तुम ब्रजेश से विवाह करना चाहती हो।

कला उठकर नीचे चली गई।

उमा कुछ देर सोचती रही, फिर वह भी नीचे उतरी।

अशोक०—पर आप लोगो को तो हद के भीतर ही लेना होगा, या दूसरे शब्दो में मुझे वह हद इतनी अधिक विस्तृत करनी होगी।

उपेन्द्र—आश्रम मे पले हुए लड़को मे से कई एक ऐसे हो सकते है, जो यह बता ही नहीं सकते कि उनका पिता कौन था।

अशोक०—आप ऐसी बात अपने लिए क्यो कहते है?

उपेन्द्र—जिसमे पीछे आप या आपका कोई सम्बन्धी हमे किसी प्रकार दोषी न ठहरा सके। मेरा तो कहना यही है कि आप चुपचाप अपनी बिरादरी मे ही विवाह कर लें।

अशोक०—'बिरादरी' माने तो भाई-बन्दी होता है—'बिरादर' भाई को कहते है भाई-बन्दी में विवाह करना तो पुराने शास्त्रो के ही अनुसार नहीं बल्कि इस समय के इस विषय के शास्त्र के अनुसार भी बहुत हानिकारक है। फिर क्या आपको यह पता नहीं कि इस बिरादरी' की सीमा बहुत संकीर्ण हो जाने से जिसकी योग्यता कौड़ी काम की नहीं है उसका भी दंभ राजसी हाथी से कम नही है। उनसे मैंने बाते करके भूल की है। अपनी उस भूल के लिए मुझे पश्चात्ताप है और अब मैं उसका प्रायश्चित्त इसी प्रकार करना चाहता हूँ।

उपेन्द्र—तब फिर आप जाति-पॉति पूछने के चक्कर में बिल्कुल न पडिए—योग्यता देखकर उसके साथ विवाह कर देना ही श्रेयस्कर होगा।

अशोक०—फिर भी लोगो की निन्दा का भी तो कुछ ध्यान रखना ही होगा। मेरे यही एक लड़की है। उसे मैंने सब लोगो का विरोध सहन करके भी, मनमाने ढंग से, पढ़ाया-लिखाया है; उसको भविष्य में जबरदस्ती अयश और निन्दा का पात्र बनना पड़े, यह तो मैं न चाहूँगा।

उपेन्द्र—स्वयं उसकी इच्छा का भी तो ध्यान रखना होगा। वह अयश और निन्दा का सामना करना चाहे तो?

अशोक०—नौकरानी पर ध्यान रखनेवाली कोई स्नेह-पूर्ण देवी हो, जो एक-आध चीज स्वयं भी बना लिया करे और परोसने तथा खाने के समय स्वयं मौजूद रहे तो कोई कमी न मालूम होगी। पश्चिमी ढंग से उच्च शिक्षित कही जानेवाली कुछ स्त्रियो मे स्वार्थ की वैसी ही नीच भावना आना सर्वथा स्वाभाविक है जैसा कि ऐसी शिक्षा पानेवाले पुरुषो मे से अधिकाश में आई। उसका तो इलाज ही दूसरा है। बल्कि यह कहना चाहिए कि उसके लिए तो उस रोग के कारण को ही दूर करना होगा। विदेशी ढंग और विदेशी भाषा मे शिक्षा पाना सबसे लज्जाजनक और ग्लानिकारक बात है। अब हममें जिस उच्च और स्वाभाविक भावना का उदय हो रहा है उसका फल यह अवश्य होगा कि थोड़े ही वर्षों में हम विश्वविद्यालय की अतिम कक्षा तक की शिक्षा अपने ही ढंग और अपनी ही भाषा मे दे सकेंगे।

दोनों ने देखा कि एक ताँगा तेजी के साथ उनके घर की ओर आ रहा है। वह आकर खडा हो गया और उसमे से डाक्टर व्रजेश उतर पडे।

उतरते ही उन्होने श्री अशोककुमार को प्रणाम करके उनसे कहा—मैं आपसे एक प्राइवेट बात कहना चाहता हूँ।

अशोककुमार उठकर एक ओर चले गये। वहाँ जाकर व्रजेश ने धीरे से कहा—मै ठीक समय पर आ गया हूँ न? मेरी माँ आपके यहाँ मेरा विवाह करने को तैयार हो गई हैं। यह उनका पत्र है।

अशोककुमार ने उस लिफाफे को बिना खोले हुए उनसे पूछा—क्यो तैयार हो गई?

'क्योकि उन्होने इसे ठीक समझा।'

'पर मैं तो अपनी लड़की का विवाह जितेन्द्र से करना चाहता हूँ।'

'ऐसा आप नहीं कर सकते।'

'क्यों?'

अशोक०—नौकरानी पर ध्यान रखनेवाली कोई स्नेह-पूर्ण देवी हो, जो एक-आध चीज स्वयं भी बना लिया करे और परोसने तथा खाने के समय स्वयं मौजूद रहे तो कोई कमी न मालूम होगी। पश्चिमी ढंग से उच्च शिक्षित कही जानेवाली कुछ स्त्रियो मे स्वार्थ की वैसी ही नीच भावना आना सर्वथा स्वाभाविक है जैसा कि ऐसी शिक्षा पानेवाले पुरुषो मे से अधिकांश में आई। उसका तो इलाज ही दूसरा है। बल्कि यह कहना चाहिए कि उसके लिए तो उस रोग के कारण को ही दूर करना होगा। विदेशी ढंग और विदेशी भाषा मे शिक्षा पाना सबसे लज्जाजनक और ग्लानिकारक बात है। अब हममे जिस उच्च और स्वाभाविक भावना का उदय हो रहा है उसका फल यह अवश्य होगा कि थोड़े ही वर्षों में हम विश्वविद्यालय की अंतिम कक्षा तक की शिक्षा अपने ही ढंग और अपनी ही भाषा में दे सकेंगे।

दोनों ने देखा कि एक ताँगा तेजी के साथ उनके घर की ओर आ रहा है। वह आकर खड़ा हो गया और उसमें से डाक्टर व्रजेश उतर पड़े।

उतरते ही उन्होंने श्री अशोककुमार को प्रणाम करके उनसे कहा—मैं आपसे एक प्राइवेट बात कहना चाहता हूँ।

अशोककुमार उठकर एक ओर चले गये। वहाँ जाकर व्रजेश ने धीरे से कहा—मै ठीक समय पर आ गया हूँ न? मेरी माँ आपके यहाँ मेरा विवाह करने को तैयार हो गई हैं। यह उनका पत्र है।

अशोककुमार ने उस लिफाफे को बिना खोले हुए उनसे पूछा—क्यों तैयार हो गई?

'क्योकि उन्होने इसे ठीक समझा।'

'पर मैं तो अपनी लड़की का विवाह जितेन्द्र से करना चाहता हूँ।'

'ऐसा आप नहीं कर सकते।'

'क्यो?'

मैनेजर—आप गिरीशजी की सहधर्मिणी हैं, इसी से यह सब जानती हैं।

कला—आप गिरीशजी को जानते हैं ?

मैनेजर ने हँसकर कहा—जब आप लोग यहाँ के बारे में इतना अधिक जानती हैं, तो क्या मै उन्हे भी न जानूँगा ?

कला—तो आप करुणा को हमारे साथ जाने देंगे ?

मैनेजर—अभी ? ऐसा कैसे हो सकता है ? आपके पिताजी को सब लिखा-पढी करनी होगी, तब यह जा सकेगी।

कला—एक दिन के लिए इन्हे मेरे साथ जाने दीजिए। पिताजी इन्हे किसी समय वापस भेज जावेंगे और सब लिखा-पढ़ी करके तब फिर इन्हे लिवा ले जावेंगे।

मैनेजर—अच्छी बात है, लिवा जाइए। यद्यपि मुझे अब भी यह यकीन नही है कि वे इसे अपनी पुत्री के रूप में रखना चाहेगे।

कला—क्यो ?

मैनेजर—उन्हे रखना है, तो अपने किसी रिश्तेदार की लडकी क्यो नही रखते ?

कला—अगर वे इसे भी अपने रिश्तेदार की ही लड़की जानते-समझते हो तब ?

मैनेजर—क्या इसी लिए यह पढ़ने-लिखने में इस तरह अपना ध्यान लगाये रही और उतने वर्ष कोई न कोई परीक्षा देती रही ?

कला—वह इसे कैसे जानती ? उसने ऐसा किया है इसी लिए हम लोग उसे जान गये है।

मैनेजर—अच्छी बात है, आप लिवा ले जाइए, पर दो बजे दिन तक अपने पिताजी के साथ वापस भेज दीजिएगा।

तब वे तीनो वहाँ से चलीं। कला बहुत ही प्रसन्न थी। रास्ते मे उसने करुणा से कहा—तुम मेरी बहन बनोगी ?

अशोक०—उसी ने तो तुमसे यह बात नहीं कही ?

माँ—नहीं, मुझे भी याद है।

अशोक०—मुझे तो याद नही।

माँ—तुमने ऊपरी मन से कह दिया था, उसे याद क्या रखते ?

अशोक०—फिर कला उसे क्यो पकड़े रही ?

माँ—उसे सचमुच इच्छा होगी एक बहन की।

अशोक०—तुम भी उससे सहमत हो ?

माँ—अगर होऊँ ?

अशोक०—अगर-मगर नहीं, तुम सन्तान चाहती होगी तो लड़का, न कि लड़की।

'क्यो ?'

'यही स्त्रियो के लिए स्वाभाविक है।'

'पुरुषो के लिए स्त्रियों के बारे मे ऐसा समझना ही स्वाभाविक है, पर स्त्रियाँ लडकियो को लड़कों से कम नहीं चाहती।'

'आजकल के शरीरशास्त्र के अनुसार लड़कियाँ होती हैं पुरुषो के अङ्गो से और लड़के स्त्रियों के अङ्गों से।'

'वह शरीर-शास्त्र उतना ही अधूरा है जितना आपके कहने का ढङ्ग।' कहकर उनकी स्त्री हँस पड़ी।

अब अशोककुमार ने पूछा—तो तुम्हारी क्या राय है ? कला का विवाह किसके साथ किया जाय ?

कला की माँ—मुझे तो इस झमेले से कहीं अच्छा पुराना ही ढङ्ग मालूम होता है जब पण्डितजी कुण्डलियो को मिलाकर दो परिवारों को आसानी से मिला देते थे।

अशोककुमार—तुम्हे न तो पुराने ढङ्ग के ही बारे मे पूरी तरह मालूम है, न नये ढङ्ग के विषय मे। पुराना ढङ्ग तो अब चल ही नहीं सकता—विवाह किसी की दलाली का मामला नही हो सकता।

१६

'आप कला के साथ विवाह करना चाहते हैं ?' ब्रजेश ने जितेन्द्र के पास आकर एकाएक पूछा।

जितेन्द्र प्रातःकाल घूमने के लिए निकला था। वह सोच रहा था अपने इस विवाह के बारे में ही। उसे इस बात की खबर पाकर कि कला एक अनाथ लड़की को अपनी बहन बनाने के लिए अपने घर लाई है, मालूम होता था मानो वह कह रही हो—जितेन्द्र भिखारिणी के भी लड़के हों तो भी मैं उन्हीं की हूँ—किन्तु इसमें कला का बेहद बड़प्पन और अपना एक ओछापन उसे दिखलाई देता था। बार-बार उसने मन ही मन कहा—मेरी इस हीन वृत्ति का कारण मेरे मन पर लड़कपन से पड़े हुए कुसंस्कार ही हैं, फिर भी उसे पूरा सन्तोष न हो रहा था। तभी ब्रजेश पीछे से तेजी के साथ उसके सामने आ गये।

प्रश्न सुनकर उसने तुरंत उत्तर दे दिया—हाँ।

ब्रजेश—पर मैं भी तो उनसे विवाह करना चाहता हूँ। मेरा उन पर कहीं अधिक अधिकार है, यह तो आप जानते ही होंगे।

जितेन्द्र—आप तड़ितबाला के साथ अपना विवाह क्यों न करेंगे ?

ब्रजेश—क्यों करूँ ? अपनी माँ को उसकी वृद्धावस्था में मैं अ-हिन्दू बना दूँ, यही आप चाहते हैं ?

जितेन्द्र—मैंने समझा था कि अब आप लोगों ने यह जान और समझ लिया है कि हिन्दुस्तान में रहनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को उसके हिन्द के रहनेवाला होने के कारण हिन्दू नाम दिया गया था,

या हिन्दू युवको के कान पर जूँ तक न रेंगी। नैतिक बल से हीन होते जाना ही पराधीनता का स्वाभाविक फल है। यह धनान्धता का युग है।

जितेन्द्र—इन्हीं बुराइयो को तो दूर करना है।

व्रजेश—उसके लिए युवको मे से अपनी बलि देनेवाले बहुत थोड़े हैं।

जितेन्द्र—उन्हे अपनी बलि देने की जरूरत है भी नहीं, उल्टे उन्हे तो मुर्दा से जिन्दा हो जाने की आवश्यकता है।

व्रजेश—और उन्हे मुर्दा बने रहने ही मे आनन्द आता हो तो?

जितेन्द्र—वह तामसिक आनन्द है, और इसी लिए उसे पैशाचिक भी कह सकते हैं—वह मनुष्यो के योग्य नहीं।

व्रजेश—हममे 'मनुष्य' कहाँ हैं?

जितेन्द्र—हो तो सकते हैं।

व्रजेश—क्या इसी लिए आप कला से अपना विवाह करने जा रहे हैं?

जितेन्द्र—आपके व्यंग्य को समझते हुए भी मै उसके उत्तर मे निस्सन्देह रूप से 'हाँ' कहना चाहता हूँ।

व्रजेश—मै तो समझता हूँ कि आपमें ऐसा कोई भाव नही, बल्कि आप मुझसे चिढ़े हुए हैं। इसी चिढ़ के कारण आपने काफी कोशिश की कि तड़ितबाला मुझसे रुष्ट ही रहे और मिले-जुले तक नहीं। अन्त मे जब आप इसमे किसी तरह कृतकार्य न हुए तब आपने यहाँ आकर कला से अपना विवाह करना चाहा—जिसमे आप कह सकें कि कला ने मेरे पतित हो जाने के कारण मुझसे विवाह न करके आपके साथ किया।

जितेन्द्र—मैं तो आपसे किसी तरह भी बढ़कर नहीं हूँ।

व्रजेश—यह तो आप अब कहते हैं, पर मैं न आता......।

ब्रजेश ने देखा जितेन्द्र के विशाल नेत्र एक नये भाव से चमक उठे, और वह घृणा या द्वेष का नहीं, गौरव और आत्म-सम्मान का भाव है। उसने विचलित होकर कहा—हममें ऐसे लोग हो चुके हैं जिन्होंने हमारी इन बुराइयो को देखा और उन्हे दूर करने का प्रयत्न किया। उनके प्रयत्न सर्वथा निष्फल नहीं कहे जा सकते। आप नई धारा शायद साम्यवाद की देख रहे हैं, पर उसमें तो किसी भी धर्म का भाव है ही नहीं।

जितेन्द्र—इसी लिए वह सबसे अधिक शक्ति-शालिनी है। बहुत समय तक धर्म का नाम ले लेकर जो होशियार लोग पृथ्वी के सुख अपने लिए और स्वर्ग के सुख जनता के लिए समझते रहे हैं उनकी दाल अब किसी तरह न गलेगी।

ब्रजेश—मैं तो आपको ऐसी बातो का माननेवाला न समझता था। अगर आप मुझे यह विश्वास दिला सकें कि आपके संघ के लोग मेरा पूरा साथ देंगे और अगर किसी दल की ओर से इस विवाह मे कोई बाधा डाली गई तो उसे दूर करने मे सहयोग देने से न हिचकेंगे तो मैं अब भी तडित से अपना विवाह कर लूँगा—आपके लिए कला को छोड़ दूँगा।

जितेन्द्र—दया करके ?

ब्रजेश—नहीं, आप मेरे कहने के ढङ्ग से चिढ़िए नहीं—उसमें अगर उच्छृङ्खलता हो गई हो तो मैं क्षमा चाहता हूँ।

जितेन्द्र—पर मेरी इच्छा तो अब यही हो रही है कि आप कला से अपना विवाह कर लें।

ब्रजेश—तो आप साफ़-साफ़ कला के पिता से यह बात कह दें।

जितेन्द्र—मैं यह कहनेवाला कौन हूँ—हाँ, इस झमेले से मै बिल्कुल हटा जाता हूँ।

२०

उमा ने तड़ितबाला को एक पत्र लिखकर अपने यहाँ की सब बातें बतलाई और अन्त मे लिखा—

मेरे सामने तो एक दिन भी कोई बातचीत किसी भिखारिणी के ऐसे कथन के बारे में नहीं हुई थी। मैंने उस भिखारिणी के सम्बन्ध में सुना ज़रूर था जिसे लेकर तुम जितेन्द्र के साथ अस्पताल गई थीं। पर केवल इतना ही कि उसकी दवा हो रही थी और पूरी आशा थी—बल्कि डाक्टर का निस्सन्देह रूप से यह कहना था—कि वह बिल्कुल ठीक हो जावेगी। अगर उसने जितेन्द्र को अपना पुत्र कहा भी होगा तो स्नेहवश या फिर पागलपन के कारण, मैं तुम्हारी सम्मति जानना चाहती हूँ।

दूसरी बात के बारे में भी अपना स्पष्ट मत लिखना। माँ तुम्हारे साथ ब्रजेश का विवाह करने को राज़ी हो गई थीं। फिर यह नई बात कैसी? मैं विश्वास करती हूँ कि उनके कई सम्बन्धी आये होंगे और उन्होंने तरह-तरह की बातें की होंगी—किन्तु क्या उनमें कोई बात ऐसी भी थी जिसका उत्तर माँ न दे सकती रही हों?

अगर तुम—अकेली या माँ के साथ—दो दिन के लिए यहाँ आ जाओ तो बहुत अच्छा हो।

तड़ित ने पूरा पत्र तीन बार पढ़ा और इस अन्तिम भाग को दो बार और। तब उसने अपने भाई किरणगुप्त को बुलाकर कहा—जितेन्द्र दादा कला के साथ अपना विवाह करने गये हैं।

२०

ा ने तड़ितबाला को एक पत्र लिखकर अपने यहाँ की सब बातें
लाई और अन्त में लिखा—

मेरे सामने तो एक दिन भी कोई बातचीत किसी
खारिणी के ऐसे कथन के बारे में नहीं हुई थी। मैंने
स भिखारिणी के सम्बन्ध में सुना ज़रूर था जिसे लेकर
म जितेन्द्र के साथ अस्पताल गई थीं। पर केवल इतना
। कि उसकी दवा हो रही थी और पूरी आशा थी—बल्कि
क्टर का निस्सन्देह रूप से यह कहना था—कि वह
ल्कुल ठीक हो जावेगी। अगर उसने जितेन्द्र को अपना
त्र कहा भी होगा तो स्नेहवश या फिर पागलपन के
ारण, मैं तुम्हारी सम्मति जानना चाहती हूँ।

दूसरी बात के बारे में भी अपना स्पष्ट मत लिखना।
ाँ तुम्हारे साथ ब्रजेश का विवाह करने को राज़ी हो गई
ों। फिर यह नई बात कैसी? मैं विश्वास करती हूँ कि
नके कई सम्बन्धी आये होंगे और उन्होंने तरह-तरह की
ातें की होंगी—किन्तु क्या उनमें कोई बात ऐसी भी थी
जसका उत्तर माँ न दे सकती रही हो?

अगर तुम—अकेली या माँ के साथ—दो दिन के लिए
यहाँ आ जाओ तो बहुत अच्छा हो।

तड़ित ने पूरा पत्र तीन बार पढ़ा और इस अन्तिम भाग को
दो बार और। तब उसने अपने भाई किरणगुप्त को बुलाकर
कहा—जितेन्द्र दादा कला के साथ अपना विवाह करने गये हैं।

दादा का ऋण कहीं अधिक है। वे न मिलते और मुझे ऐसे सुपथ पर हाथ पकडकर न ले जाते तो जाने क्या होता। मेरी माँ बडी ही स्वाभिमानिनी है और मेरे पिता ऐसे उदार विचारो के थे कि हमारे रिश्तेदारो और पडोसियो मे से अधिकाश उनसे चिढ गये थे और कई उनके शत्रु हो गये थे। मैं जितेन्द्र दादा के साथ दो वर्षों तक रही और तब बीच-बीच मे उन्होने आवेश-पूर्ण ढङ्ग से अपनी यही आशा प्रकट की थी कि मैं भी जीवन भर अविवाहित रहकर उस महान् कार्य मे अपने मन को लगा दूँ जिसकी इस समय सारे संसार को और विशेषत: इस देश को ऐसी अधिक आवश्यकता है। मैंने कई बार उनसे कहा था कि मैं ऐसा ही करूँगी।

और तब तडित बोल न सकी। उसका गला रुँध गया। वह चुप बैठी रह गई।

माँ ने कहा—तुम लोगो के घर-गृहस्थी चलाने को महान् कार्य्य न मानकर उसे अत्यन्त छोटा या तुच्छ कार्य्य कहने से क्या वह काम सचमुच ऐसा हो जाता है? कैसा अच्छा हो, यदि संसार भर के लोग ऐसे ही छोटे काम मे लग जावें, तब न तो कोई फौज हो, न भिखमङ्गो का दल और न चोरो और लुटेरो आदि के समूह। 'महान्' कार्य्य के चक्कर मे पडकर ही, हम सब दूसरो को लूटकर, धोखा देकर या उन्हें दबाकर तरह-तरह से बड़े आदमी बनना चाहते है। इसी लिए ईर्ष्या, द्वेष, कुत्सा और घृणा के भाव फैलते हैं और मानव खून की नदियाँ बह उठती हैं।

तडित ने कहा—हो सकता है माँ, तुम्हारा कहना बिल्कुल सत्य हो, पर जो आग अपने पड़ोसी के घर मे लगी है उसे बुझा देना दूसरो की दृष्टि से महान् कार्य है किन्तु वास्तव मे वह है केवल दूरदर्शिता, क्योकि आलस्य, द्वेष या प्रमाद-वश उस समय अपनी गृहस्थी के कामो को ही पूरा करते रहने से वह आग अपने घर में

होता है—सब काम करो, पर सबसे ऊपर और सब समय स्वदेश की पुकार सुनने को तैयार रहो—'यही स्वाधीन देशों का प्राणप्रद मूल मंत्र है।'

तड़ित आश्चर्य से माँ की ओर देखने लगी। उसे ऐसी बात उनसे सुनने की आशा कभी न थी।

माँ ने उसके आश्चर्य के भाव को देखकर कहा—मैं तो तुमसे कई बार कह चुकी हूँ कि मेरे पति ने ज़िन्दगी भर इसी रास्ते पर जाने का प्रयत्न किया था, पर हुआ कुछ भी नहीं। अन्त में वे अच्छी तरह जान गये थे कि उनकी वास्तविक दुर्बलता कहाँ थी। मैं उससे कहीं अधिक कमज़ोरी अपने लड़के व्रजेश में देख रही हूँ। अगर वह इस समय कोई ऐसा महान् कार्य्य करने में संलग्न हो जाय तो कल ही अपने साथियों को छोड़कर उनके साथ विश्वास-घात करने पर उतारू हो जावेगा और उस महान् कार्य्य को कठिन से कठिन चोट जो वह पहुँचा सकता है पहुँचा देगा। इसका कुछ दुःखद अनुभव मैं अपने सम्पूर्ण व्यथित हृदय से कर रही हूँ।

इस दुःखिनी और व्यथित की अन्तर्ज्वाला को तड़ित ने तुरन्त देख लिया और वह स्वयं मर्माहत सी हो उठी।

थोड़ी देर बाद उसने कहा—तो मुझे क्या करना चाहिए? उमा ने जो वहाँ जाने की बात लिखी है—

माँ—हाँ, हमें चलना चाहिए। मैं उस लड़के को धिक्कारना चाहती हूँ और पूरी तरह धिक्कारना चाहती हूँ। तुम्हें अपने घर में पाकर मुझे सचमुच पूरा आनन्द होगा—तुम जिस उच्च कर्त्तव्य कर्म में लगोगी, मुझे उसमें पिछड़ी न पाओगी। मैं अपने पति का साथ नहीं दे सकी। मेरा साथ न पाकर, बल्कि मुझे अपने लिए वेढब भाररूप किन्तु आवश्यक भाररूप पाकर वे भी अपना मनचाहा काम कुछ भी न कर सके—तुम्हें ज़रूर मेरी यह बात ठीक न लगती होगी कि मैं अपने को भाररूप

होता है—सब काम करो, पर सबसे ऊपर और सब समय स्वदेश की पुकार सुनने को तैयार रहो—'यही स्वाधीन देशों का प्राणप्रद मूल मंत्र है।'

तड़ित आश्चर्य से माँ की ओर देखने लगी। उसे ऐसी बात उनसे सुनने की आशा कभी न थी।

माँ ने उसके आश्चर्य के भाव को देखकर कहा—मै तो तुमसे कई बार कह चुकी हूँ कि मेरे पति ने ज़िन्दगी भर इसी रास्ते पर जाने का प्रयत्न किया था, पर हुआ कुछ भी नहीं। अन्त मे वे अच्छी तरह जान गये थे कि उनकी वास्तविक दुर्बलता कहाँ थी। मै उससे कहीं अधिक कमज़ोरी अपने लड़के व्रजेश में देख रही हूँ। अगर वह इस समय कोई ऐसा महान् कार्य्य करने मे संलग्न हो जाय तो कल ही अपने साथियों को छोड़कर उनके साथ विश्वास-घात करने पर उतारू हो जावेगा और उस महान् कार्य्य को कठिन से कठिन चोट जो वह पहुँचा सकता है पहुँचा देगा। इसका कुछ दु:खद अनुभव मैं अपने सम्पूर्ण व्यथित हृदय से कर रही हूँ।

इस दु:खिनी और व्यथित की अन्तर्ज्वाला को तड़ित ने तुरन्त देख लिया और वह स्वयं मर्माहत सी हो उठी।

थोड़ी देर बाद उसने कहा—तो मुझे क्या करना चाहिए? उमा ने जो वहाँ जाने की बात लिखी है—

माँ—हाँ, हमे चलना चाहिए। मैं उस लडके को धिक्कारना चाहती हूँ और पूरी तरह धिक्कारना चाहती हूँ। तुम्हें अपने घर में पाकर मुझे सचमुच पूरा आनन्द होगा—तुम जिस उच्च कर्त्तव्य कर्म मे लगोगी, मुझे उसमें पिछड़ी न पाओगी। मैं अपने पति का साथ नहीं दे सकी। मेरा साथ न पाकर, बल्कि मुझे अपने लिए केवल भाररूप किन्तु आवश्यक भाररूप पाकर वे भी अपना मनचाहा काम कुछ भी न कर सके—तुम्हें ज़रूर मेरी यह बात ठीक न लगती होगी कि मैं अपने को भाररूप

२१

झाँसी रेलवे स्टेशन के बाहर आकर तड़ितबाला ने कहा—माँ, मै तो जितेन्द्र दादा के घर पर ठहरूँगी, आप ब्रजेशजी से अभी यह न कहिएगा कि मैं भी आपके साथ आई हूँ।

माँ न मन ही मन रुष्ट होकर कहा—अच्छी बात है। मैं क्यों कहूँगी? पर मुझे उस होटल में पहुँचाकर जहाँ ब्रजेश है, तब दूसरी जगह जाना।

तड़ित०—हाँ, ऐसा तो करूँगी ही। आप विश्वास कीजिए मेरे इसी ढङ्ग से आप ब्रजेशजी को अपने मन के अनुकूल बना सकती हैं, और तरह नहीं।

माँ ने कुछ भी उत्तर न दिया। वे सब एक ताँगे पर बैठे और उस होटल के लिए चल दिये, जहाँ तड़ितबाला उस समय ठहराई गई थी जब वह डाक्टर ब्रजेश से मिलने यहाँ आई थी। इस समय इसी होटल मे ब्रजेश ठहरे हुए थे।

होटल के बाहर जाकर एक नौकर को बुलाकर तड़ित ने पूछा—डाक्टर ब्रजेश इस समय यहाँ है?

उसने कहा—मैं अभी देखकर बतलाता हूँ। पाँच मिनट के भीतर आकर उसने कहा—हाँ, हैं पर कहीं जाने को तैयार हो रहे हैं।

'तो आप जाइए माँ! मै कल आपकी सेवा मे उपस्थित हो जाऊँगी।' कहते हुए तड़ित भी नीचे उतरी और जब माँ नौकरो के साथ भीतर चली गईं तब फिर ताँगे पर बैठकर उपेन्द्र के घर की ओर चली।

जितेन्द्र ने हँसकर कहा—क्यो किरण, बड़े दादा को देखते ही छोटे की बुराई शुरू कर दी !

इस पर सभी हँस पड़े।

इसके दो घण्टे बाद खाना खाते समय तड़ित ने कहा—जितेन्द्र दादा, आपने अपने विवाह का नेवता हम लोगो को नहीं भेजा, इससे हमे जबरदस्ती ही आना पड़ा।

जितेन्द्र—घरवालो को भी नेवता भेजना पड़ता है क्या ?

तड़ित०—पर घरवालो से इस तरह छिपाव भी तो नही करना होता।

जितेन्द्र—तो तुम समझती हो कि मै कला के साथ अपना विवाह करने जा रहा हूँ ?

तड़ित०—समझती हूँ। अब भी कुछ समझना शेष है, क्या दादा ?

जितेन्द्र—कुछ समझना ! अभी तो तुम्हारे लिए सभी कुछ समझना शेष ही जान पड़ता है। क्या मैं इतना भी न सोच सकता था कि जब मैं यह कहूँगा कि कला से विवाह करना चाहता हूँ तब ब्रजेश उसकी ओर फिर दौड़ेगा ?

तड़ित०—क्या आपने ऐसा सोचा था ?

जितेन्द्र—क्यो न सोचता। यही सोच-समझकर तो यहाँ आकर यह अपमान सहन करने को उद्यत हुआ।

'क्यों ?'

'यह प्रश्न अपने हृदय से पूछो। बहन तडित, यह देखकर भी ब्रजेशजी ऐसी तेजी से फिर कला की ओर दौड पड़े, तुम असली तत्त्व पर विश्वास न कर सकीं।'

तड़ित०—किस तत्त्व पर ?

जितेन्द्र—इसी पर कि वस्तुत. हमारे मिलन की अभिलाषा आत्मिक है—आत्मा एक ही है, फिर भी मानों वह इतने अधिक-

अपूर्व स्फूर्ति आ जानी चाहिए—वैसी सच्ची आनन्दमयी स्फूर्ति हमे और किसी तरह भी नहीं मिल सकती, क्योकि इस प्रकार हम दो चार से नहीं, हजारो और लाखो से भी नही, बल्कि पृथ्वी के सभी प्राणियो की आत्मा से एक हो जाते हैं। विचित्र सुअवसर है, तड़ित! आओ हम नीच वासनाओ क बन्धन को तोड़ दे।

तडितवाला मंत्र-मुग्धा की भाँति जितेन्द्र की ओर देख रही थी। उसके अणु-अणु से, रक्त की प्रत्येक बूँद से मानो यही आवाज़ आने लगी—विचित्र सुअवसर है, तड़ित। आओ वासना के बन्धन तोड़ दें।

वह कौर तोड़ना भूलकर चुपचाप बैठी रही! फिर उसने कहा—आपने कभी ऐसो बातचीत डाक्टर व्रजेश से नहीं की?

जितेन्द्र—की है, पर उन्होने इसकी हँसी ही उड़ाई है। हाँ, कला ऐसे काम में लगने की अधिकारिणी जान पड़ती है। उमा ने उसकी उचित प्रशसा की थी।

तड़ित०—अगर व्रजेश नौकरी छोड़कर हम लोगो का साथ दें।

जितेन्द्र—यह असम्भव है।

तड़ित०—अगर यह असम्भव हुआ तो मेरा उनके साथ विवाह करना भी असम्भव होगा।

जितेन्द्र—ठीक कहती हो?

तडित०—हाँ, बिलकुल ठीक कहती हूँ, जितेन्द्र दादा।

खाना खा पीकर वह उमा के घर गई। वे अभी-अभी कला के यहाँ से आई थीं और वहाँ यह जान आई थीं कि डाक्टर व्रजेश की माँ भी आ गई हैं। तडित को देखते ही वे प्रसन्न हो गई और उसका स्वागत करते हुए कहा—मेरा पत्र मिल गया था?

तडित०—आपकी ही आज्ञा के अनुसार तो दौड़ी आई हूँ।

तब दोनों मे बातचीत होने लगी। अन्य बातों के बाद उमा ने पूछा—अब तुम्हारा क्या इरादा है?

तड़ित०—तो तुम आज व्रजेशजी से मिलने पर उनसे यह कह देना तड़ित डाक्टरी का पढना छोड़कर सेवा-संघ में वापस चली गई।

उमा—इससे क्या होगा?

तड़ित०—जो कुछ होगा, उसे स्वयं ही देखना।

उमा—क्या वे तुरन्त लखनऊ के लिए चल खड़े होगे?

तड़ित०—यह असम्भव नहीं है।

उमा—पर तुम तो यही हो।

तड़ित०—मै उन्हे स्टेशन से वापस लाऊँगी।

'सचमुच?'

'हाँ।'

लेकिन उनकी माँ ने बतला दिया होगा कि तुम भी उनके थ आई हो।

'नहीं, मैंने उन्हे मना कर दिया है।'

'अच्छी बात है। मै भी देखूँगी कि तब कैसा तमाशा होता है।'

'तमाशा?'

उमा—और क्या? एक सीधा-सादा युवक तुम्हें और कला को ा गया है। दोनो मिलकर नाहक उसे बेवकूफ बना रही हो।

तड़ित०—वे स्वय अपने आप को बेवकूफ बना रहे है—जैसा आज-कल के अधिकांश 'उच्चशिक्षित' कहे जानेवाले युवक ते है। नैतिक शिक्षा और उसके अनुकूल क्षेत्र के अभाव के रण ही उनकी ऐसी दुर्दशा है।

उमा—'मेरे पति ने तो ऐसा नहीं किया था।' उमा का स्वर नोदमय था।

तड़ित०—उन्हे ऐसा अवसर ही न मिला होगा। अवसर लने पर ही तो परीक्षा होती है।

'मैं तो उन्हें ऐसी परीक्षा में कभी न डालती।' कहकर उमा र से हँस पड़ी।

दूसरे दिन जब वे अशोककुमार के पास गये तब उन्होने कहा—मैंने सुना है कि कल आपकी माँ आई हैं।

व्रजेश ने कहा—जी हाँ, और आज तड़ित भी आवेगी।

'क्यो ?'

'क्योकि आपकी यही इच्छा है।'

अशोककुमार हँसकर बोले—मेरी इच्छा तो आप खूब समझ लेते हैं। पर मैं स्वयं उसे इतनी जल्दी समझ नहीं पाता हूँ। कला अनाथ सेवासदन से एक बारह-तेरह वर्ष की लडकी पकड़ लाई है। मैंने बहुत सोचा कि उसने ऐसा क्यो किया, पर कुछ समझ नहीं पाया। आप कुछ बता सकते हैं ?

'हाँ। इसमें क्या है ? यह तो बिलकुल सीधी सी बात है। वह इस लड़की का विवाह इसके और बड़ी हो जाने पर किरण गुप्त के साथ करना चाहती है।'

'किरण गुप्त कौन है ?'

'तड़ितबाला का भाई। गत वर्ष वह इन्ट्रेंस में सर्वप्रथम हुआ था। अब एफ० एस्-सी० में है।'

'आपको यह कैसे मालूम है कि वह ऐसा करना चाहती है ?'

'मुझे और किसी तरह नहीं मालूम—केवल अपने बुद्धि-बल से ऐसा कह रहा हूँ।' कहकर व्रजेश हँसे।

अशोककुमार कुछ देर चुपचाप सोचते रहे, फिर बोले—देखिए, कल हम लोगो ने एक बात तय की है। पहले समय मे, जब स्वयवर की प्रथा थी, लड़को के शारीरिक और मानसिक बल की तरह-तरह से परीक्षाएँ ली जाती थीं। सम्पूर्ण जाति का अध पतन हो जाने से वैसी परीक्षाएँ असम्भव हो गई। किन्तु अब जो नवीन जीवन और जागृति के चिह्न दिखलाई देने लगे हैं उनके अनुसार हम लोगों ने यह निर्णय किया है कि जिन्होने स्वदेश-सेवा के क्षेत्र में जाने का कभी साहस या

अशोककुमार—पर कला की हार्दिक इच्छा यही है।

'तो मैं उसके लिए भी तैयार हूँ।' ब्रजेश का स्वर यथेष्ट दृढ़ था।

× × ×

जब ब्रजेश अशोककुमार के यहाँ आये तभी उनकी माँ उपेन्द्र के यहाँ चली गईं। वे तड़ितबाला को अपने साथ उस होटल में लिवा ले जाना चाहती थीं। पर तड़ित ने कहा—दो दिन के लिए मुझे और क्षमा कीजिए माँ। दो दिन बाद मैं ख़ुद वहाँ आ जाऊँगी।

माँ—पर कल तो तुमने आज आने की बात कही थी और मैंने ब्रजेश से भी यही कह दिया है।

तड़ित०—इससे क्या? वे समझ लेंगे कि किसी विशेष कारण से मैं नहीं आ सकी।

माँ—पर इसका प्रभाव बुरा हो सकता है न?

तड़ित०—अगर मेरे उनके पास तक न दौड़ने से कोई ऐसा प्रभाव भी पड़े तो उसका पड़ जाना ही अच्छा।

तब माँ कुछ न बोलीं। जब वे लौटीं, तब बहुत उदास थीं।

इसके दूसरे दिन लखनऊ से डा० ब्रजेश के नाम तार आया—कल रात में कुछ लोगों ने घर में आग लगा दी। दो आदमी पकड़े गये हैं। सब चीजें नष्ट हो गई हैं। तुरन्त आओ।

माँ इसे सुनते ही भयभीत हो गईं। उन्होंने कहा—अन्त में दुष्टों ने वही किया जिसका मुझे डर था। हमारा समाज बेहद अंध-विश्वासी, डरपोक और कायर हो गया है। उसे अब भी यह विश्वास नहीं होता कि इस देश के सभी लोगों से खान-पान और विवाह-सम्बन्ध जोड़कर हम कहीं अधिक सबल हो जावेंगे न कि निर्बल। अच्छी बात है, तुम कला से ही विवाह कर लो। उन्हीं की इच्छा पूरी हो।

मान का होने से उनमें से हरेक मुसलमान है तथा उदार हृदय
ा होने से उनमे प्रत्येक क्रिश्चियन है—श्रेष्ठ होने से वह आर्य
और असल मे तो हम सब एक ही ब्रह्म का अंश होने से ब्रह्म-
माजी हैं। मैं आज अपना विवाह तड़ित के साथ करने जा
हा हूँ। तुम और तुम्हारे साथी वस्तुत' हिन्दूसमाज और
स देश हिन्दुस्तान के वास्तविक शत्रु हैं; उसे पीछे हटानेवाले,
से बन्धन मे रखनेवाले, और उसके लिए कलकरूप हैं। तुम
ोग मेरा कुछ भी नही बिगाड़ सकते। मै लखनऊ मे होता तो
स कायरता के ढंग से आग लगानेवालो को तुरंत मज़ा चखा
ता; अब भी मै उन्हे देखूँगा।

आगन्तुक—अच्छी बात है, पर आप भी होशियार रहिएगा।

ब्रजेश ने शात स्वर मे कहा—बहुत अच्छा जनाब!

माँ कुछ कहना चाहती थी, पर वह आगन्तुक चल
पड़ा हुआ।

डाक्टर ब्रजेश की आँखे जल रही थीं, उनका हृदय जल रहा था और उनके दिमाग़ में भी जलन थी। उन्होंने कहा—न माँ, अब तो ऐसा हो ही नहीं सकता। मै तड़ितबाला से विवाह करूँगा और तुरन्त ही। चलो, हम इसी समय लखनऊ चलें।

माँ ने कहा—तडित तो यहीं आ गई है।

ब्रजेश—कहाँ है?

माँ—उपेन्द्र के यहाँ।

'तो तुरत चलो, आज ही मेरा उसका विवाह हो जाना चाहिए और यहीं।'

इसी समय एक आदमी ने आकर कहा—जनाब, ऐसा नहीं हो सकता। अहिन्दू से आप किसी तरह विवाह नहीं कर सकते।

ब्रजेश ने ज़ोर से कहा—मैं ज़रूर करूँगा। तुम मुझे रोकनेवाले कौन हो?

आगन्तुक—मैं हूँ हिन्दू समाज का एक प्रतिनिधि।

ब्रजेश—ऐसा व्यक्ति हिन्दूसमाज का एक प्रतिनिधि कभी नहीं माना जा सकता। तुम हिन्दूसमाज के [illegible] के प्रतिनिधि हो। हिन्दूसमाज में इस समय सिक्ख, जैन, बौद्ध, आर्यसमाजी, ब्रह्मसमाजी आदि आदि अनेक पंथवाले हैं, इनमें से अधिकांश जातिपाँति बिलकुल नहीं मानते। तुम्हें किसने प्रतिनिधि रूप से यहाँ भेजा है?

आगन्तुक—ये सभी तो हिन्दू हैं—इनमें से आप चाहें जिससे अपना विवाह करें, पर किसी अहिन्दू के साथ नहीं कर सकते।

इमान का होने से उनमें से हरेक मुसलमान है तथा उदार हृदय का होने से उनमे प्रत्येक क्रिश्चियन है—श्रेष्ठ होने से वह आर्य है और असल मे तो हम सब एक ही ब्रह्म का अंश होने से ब्रह्म-समाजी हैं। मै आज अपना विवाह तड़ित के साथ करने जा रहा हूँ। तुम और तुम्हारे साथी वस्तुतः हिन्दूसमाज और इस देश हिन्दुस्तान के वास्तविक शत्रु है, उसे पीछे हटानेवाले, उसे बन्धन मे रखनेवाले, और उसके लिए कलंकरूप हैं। तुम लोग मेरा कुछ भी नही बिगाड़ सकते। मै लखनऊ मे होता तो इस कायरता के ढंग से आग लगानेवालो को तुरंत मजा चखा देता; अब भी मैं उन्हे देखूँगा।

आगन्तुक—अच्छी बात है, पर आप भी होशियार रहिएगा।

व्रजेश ने शात स्वर मे कहा—बहुत अच्छा जनाब!

माँ कुछ कहना चाहती थी, पर वह आगन्तुक चल खड़ा हुआ।

यह सुनने पर कि लखनऊ में डा० ब्रजेश के मकान में आग लगा दी गई है, अशोककुमार पर सब से विचित्र प्रभाव पड़ा। एक समय इनके मन में भी किसानों की सेवा करने की उमंग ने व्यावहारिक रूप में उन्हें एक गाँव के एक तिहाई हिस्से का 'साम्यवादी ज़मींदार' बनने को विवश कर दिया था। वह छोटा सा गाँव था और एक पहाड़ी के निकट बसा हुआ था। पहाड़ी के बिलकुल पास एक नदी बहती थी। चारों ओर जंगल था। ऐसा स्थान उन्हें प्रकृति का वरदान जान पड़ा। नौकरी चाकरी से अलग हो, वृद्धावस्था में यहाँ बसकर, प्रकृति के सौन्दर्य में उसके स्रष्टा के सौन्दर्य के और किसानों की सेवा में स्वयं नर-नारायण के साक्षात्कार करने की अभिलाषा की पूर्ति उन्हें यहीं सम्भव जान पड़ती थी।

किन्तु कुछ समय तक वहाँ रहने के बाद उन्होंने देखा कि वहाँ सेवा का मार्ग उन्होंने जितना कठिन समझा था उससे कहीं अधिक कठिन है। अशिक्षा, आत्म-विश्वास-हीनता, छुआ-छूत, अनैतिकता भी यहाँ भी बहुत अधिक हो गई है। पर [illegible] नाना प्रकार तरह के पाखण्ड [illegible] भी सबक, जैसे [illegible] इनमें से उन [illegible] का शाब्दिक अर्थ जान लेते हैं [illegible] के दूर करने का साधन [illegible] और [illegible] नहीं है। इतना ही नहीं, [illegible]

के द्वारा यह दुर्दशा बहुत अंश तक दूर की जा सकती है। हताश और निराश से होकर वे अपनी नौकरी पर वापस आये और सोचा फिर वहाँ कभी नहीं जायेंगे।

किन्तु उन्होंने इस प्रकार अपना जो सम्बन्ध गाँववालो से जोडा वह टूटा नही। जैसे-जैसे कला इन्ट्रैंस, एफ० ए० और बी० ए० की परीक्षाओ में उत्तीर्ण होती गई वैसे-वैसे उनके विरोधी उनकी निन्दा का क्षेत्र विस्तृत से विस्तृततर करते गये। उस गॉव के एक सज्जन बी० ए०, एल-एल० बी० थे, एक एम० ए० पास करके ए० जी० आफिस मे क्लर्की करते थे और दो इन्ट्रैस मे दो दो बार फेल होकर कानपुर के मिलो में थे। पर इनमे केवल एक इन्ट्रैंस फेल महाशय ही इनका साथ दे सके थे, शेष सभी विरोधी दल में थे। वकील साहब उन सबके लीडर थे। उन्होंने वहाँ के लोगो को यह समझाया था कि अशोककुमार आप लोगो की सेवा करने के बहाने आपका धर्म-कर्म सब नष्ट कर देना चाहते हैं; सबके साथ खान-पान में कुछ आपत्ति नहीं करते,—ईसाई, मुसलमान, हरिजन, आदि सभी के साथ खाते पीते हैं और अपनी लड़की तथा अपनी स्त्री को भी जबरदस्ती उसी रास्ते पर ले जा रहे हैं।

वकील साहब ने विश्वविद्यालय मे पढ़ते समय अन्य अधिकांश विद्यार्थियो की तरह स्वयं भी रोटी-दाल इत्यादि खाने की थाली कहार से मॅगा-मॅगाकर अपने कमरे में कई बार पेट भर खाना खाया था और वे दो बार ऐसे सहभोजो में भी शरीक हो चुके थे जिनमे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, हरिजन इत्यादि सभी सम्मिलित थे पर अब वे कट्टर जनता के कट्टर नेता बने हुए थे, क्योंकि अपनी दाल गलाने का उन्हें यही ढग दिखलाई दे रहा था। अशोककुमार चाहते तो प्रयत्न करके इन सब बातों [illegible]
[illegible] वे जनता पर जो धाक वकील साहब ने जमा [illegible]

रंग सहज ही बदरंग कर सकते थे पर ऐसा न करके उन्हें निर्भयता-पूर्वक अपने रास्ते पर अपने ढंग से चलते जाना ही ठी समझा। उन्हें यह विश्वास था कि सत्य का प्रकाश एक न ए दिन इन लोगों को सब चीजों को वास्तविक रूप में देखने के लि मजबूर कर देगा।

किन्तु इस अग्निकांड का समाचार सुनते ही उन्हें जान प कि वह समय अभी बहुत दूर है। उन्होंने अपनी स्त्री को अप कमरे में बुलाकर कहा—तुमने लखनऊ में आग लगने क बात सुनी?

'हाँ, अभी उमा आई है। उसी ने बताया है।'

'मैं तो समझता हूँ कि यह काम हमारे विरोधियों में से ही कि ने करवाया है।'

'क्यों?'

'शायद मैंने तुम को एक बार बतलाया रहा हो कि मेरे पास एक धमकी का पत्र आया था कि जाति-पाँति तोड़कर कला का विवाह ब्रजेश के साथ करने से समाज दंड दिये बिना न रहेगा।'

कला की माँ—हमारा काम तो हिन्दू-समाज की निर्बलता दूर कर उसे शक्तिशाली बनाने के ही लिए है।

अशोक०—यह तो तुम समझ सकती हो। ये इसे माने या जानना चाहें तब तो—

कला की माँ—यह बात तो वे कला का जितेन्द्र के साथ विवाह होने पर भी कहेंगे।

'नहीं, मै तो पूछ रही हूँ।'

अशोक०—ऐसी बात क्यो पूछ रही हो ? अब तो मै चाहता हूँ कि कला दो-तीन वर्ष तक विवाह न करने का हठ छोड़कर तुरत अपना विवाह जितेन्द्र के साथ कर ले।

कला की माँ—उमा की भी यही सम्मति है।

अशोक० ने प्रसन्न होकर कहा—तब यही बिल्कुल ठीक है। तुम उमा से कहो। वह कला को राजी कर लेगी।

कला की माँ—पर जितेन्द्र बी० ए०, एम० ए० तो नहीं है।

अशोक०—इससे क्या ? वह राष्ट्रीय गुरुकुल का उपाधिधारी है—विद्यालंकार है, उस गुरुकुल का जिसमें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि तथा अन्य सब लोगो के बच्चो को पढ़ाने का सन्तोष-जनक प्रबन्ध है और जो लोग वहाँ से पढ़-लिखकर पच्चीस वर्ष की अवस्था में बाहर आते है वे इन बी० ए०, एम० ए० पास लोगों से तो सैकडो गुना श्रेष्ठ होते है। अँगरेजी विश्वविद्यालयवाले तो मेकाले साहब की अराष्ट्रीय बल्कि राष्ट्रीयता-विरोधी शिक्षा पद्धति के कुफल हैं और अगर उनमे हजार मे एक सुफल निकल आता है तो उसे अपवाद-रूप ही क्यो न समझा जाय ? उसके ऐसा हो जाने का कारण उसका किसी विशेष वातावरण मे रहना, माँ-बाप या अन्य किसी का खास तौर से अच्छा असर पड़ना और कुछ वास्तविक ज्ञान का प्रकाश पा लेना ही होता है। तुम तो जानती हो कि अगर मै कला को राष्ट्रीय कन्यागुरुकुल मे भेजने का प्रबन्ध कर सकता तो मुझे कितनी प्रसन्नता होती। पर ऐसा गुरुकुल अभी तक है ही नहीं। बडी मुश्किलो मे तो लड़को के ही लिए कुछ प्रबन्ध अब तक हो सका है। फिर ब्रजेश भी तो बी० ए०, एम० ए० नहीं हैं। एफ० एस-सी० होने के बाद उन्होंने पाँच साल मे डाक्टरी परीक्षा पास की, फिर हाउस-सर्जन रहने के बाद डाक्टरी का पद पाया।

आर्थिक स्थिति—कला की माँ ने कहना चाहा—

कला -हम सब एक दूसरे के लिए कुछ न कुछ रहस्यमय हैं, और हम अपने लिए भी कम रहस्यमय नहीं हैं—यही तो हमारी जिन्दगी का मजा है।

उमा—तो अब तुम्हें अपनी जिन्दगी में नया मजा आ रहा है।

कला—यह बात तो है। कला अब वास्तविक कला बन सकेगी, ऐसी आशा हो रही है।

दोनों हँस पड़ीं, पर एक दूसरे के सर्वथा प्रतिकूल भावों के साथ।

——

२४

उमा के यहाँ जाकर तड़ितबाला ने अपने हृदय के अन्तस्तल के वे सभी भाव, जिनके द्वन्द्व से वह परेशान हो रही थी, उमा के सामने प्रकट कर दिये। तब उमा उसे अपनी ऐसी बातें भी बतलाने को विवश हो गई जिन्हें उसने अपनी घनिष्ठ सखी कला से भी कभी न कहा था।

जब तड़ित ने कहा, अब मैं डाक्टर व्रजेश के साथ अपना विवाह नहीं कर सकती, जितेन्द्र दादा के इतने दिनों तक समझाने से भी जो कुछ मैं किसी तरह न मानना चाहती थी, उसे मैंने प्रत्यक्ष देख लिया तब उमा ने यह ख़याल करके कि कदाचित् तड़ित यही समझती थी कि व्रजेशजी जो कुछ करना चाहते हैं उसमें उनके मन में जितेन्द्र के प्रति रोष, द्वेष और ईर्ष्या ही प्रधान कारण है, उससे हँसकर कहा—स्त्री को पुरुषों की लेखनी ने बड़ी रहस्यमयी चित्रित किया है, पर यदि वे अपनी ओर देखते तो अपने को उससे कम रहस्यपूर्ण न पाते! शेली और बाइरन आदि की कविताएँ और जीवनचरित्र पढ़-पढ़कर आजकल के विश्वविद्यालयों के विद्यार्थिगण नीतिहीन और हमारी सामाजिक व्यवस्था के विरोधी बन स्वयं भी वैसे ही 'रोमांस' की रचनाएँ करने लगते हैं। जानती हो न कि शेली साहब किन किन लड़कियों को लेकर किस तरह भागे थे और बाइरन साहब ने कितनी स्त्रियों को कैसी धोखेबाजी से गिराया था?

तड़ित०—यह सब मैं नहीं जानती!

उमा—व्रजेशजी ने ऐसी पुस्तकें कभी नहीं दी थीं?

तड़ित०—मेरा पढना-लिखना छूट गया था, मेरी साथिनें एक कक्षा आगे निकल गई थी। सेविका बनने पर भी मुझे यह साफ दिखलाई दे रहा था कि और शिक्षा पा लेना मेरे लिए कितना अच्छा होगा। फिर मेरा भाई भी शिक्षा पा रहा था। मुझे कुछ अधिक तो मिलता न था। किन्तु व्रजेशाजी उस समय सहायक रूप से मेरे यहाँ नही आये। वे तब इस तरह आये जब मै बिल्कुल बेकार बैठी थी।

उमा—जितेन्द्रजी उस समय अपने रुपये तुम्हें क्यो नही देते रहे?

तड़ित०—उन्हे मिलते ही न थे। वे तो वहाँ से चले गये थे।

उमा—व्रजेशाजी ने तुम्हे रुपये दिये?

तड़ित०—हाँ, और उन्होने मुझे एक नये ही संसार में खींच लिया।

वह अपने इस वाक्य पर झुँझला सी उठी। और बोली—मेरा मतलब यह है कि जितेन्द्र दादा के संसार का सर्वस्व है त्याग, संयम, आत्म-विश्वास और साथ ही समर्पण। किन्तु व्रजेशाजी का संसार आधुनिक अर्थशास्त्र, नवीन समाजशास्त्र और नये प्रेमशास्त्र से परिपूर्ण है। उन्होने मुझे अपना अमूल्य समय दिया, अमूल्य शिक्षाएँ दीं और ऐसा जान पडा कि मुझे अपना प्रेम भी दिया।

'यही तुमने भूल की।' उमा ने गंभीरता से कहा। तनिक रुककर वह फिर बोली—पुरुषो में से अधिकांश और तो सब जानते हैं पर प्रेम नहीं जानते और नही जान सकते। उनके मन और हृदय का इतना विकास ही नहीं हो पाता—हो भी नहीं सकता। तुम्हारे जितेन्द्र दादा का तुम्हारे साथ ठीक सहोदर भाई कैसा स्नेह होने में मुझे सन्देह नही है, पर तुम इस भूल में कभी न पड़ना कि तुम उनके साथ अपना जीवन इसी तरह काट सकती हो। दुनिया इसे सह भी न सकेगी। तुम दोनो को बेहद बदनाम

नलिनी ने झेंपकर कहा—जरूर दी थीं, मैं आपसे कुछ भी न छिपाऊँगी, पर मैंने उन्हें पढ़ा कभी नहीं। जितेन्द्र दादा ऐसी पुस्तकें न पढ़ने की बहुत पहले ही मुझसे प्रतिज्ञा करवा चुके थे, मैं उस प्रतिज्ञा के विरुद्ध कुछ न कर सकती थी।

रमा ने ज़ोर से हँसकर कहा—उस प्रतिज्ञा के या उन प्रतिज्ञाओं के?

नलिनी०—उनमें से प्रायः सभी प्रतिज्ञाओं के। आप सब बातें तो जानतीं नहीं, आपको शायद यह भी मालूम नहीं कि जितेन्द्र दादा अपने राज से जो पचास रुपये प्रतिमास पाते हैं उसमें से वे पूरे दो वर्षों तक हम लोगों को चालीस रुपये हर महीने देते रहे थे और मुझे देखकर पहले ही दिन उन्होंने मेरा हाथ पकड़कर कहा था—मैं तुझे अपनी बहन बनाता हूँ। जन्म भर तू मुझे सगा भाई नहीं मान सकेगी तो मैं तुझसे अगले जन्म में [illegible] तक नहीं।

और नलिनी के वे विशाल नेत्र बहन के स्नेह-नीर से भर गये। अपने को सँभालकर उसने फिर कहा—हम लोगों ने यही समझा था कि ये रुपये मेरे पिताजी की अँगरेजी पुस्तकों की रॉयल्टी के हैं।

उन्होंने हमें कभी यह बताया ही नहीं कि ये रुपये कहाँ से [illegible]। [illegible] पिताजी की कई पुस्तकें [illegible] स्कूलों में चलती थीं। [illegible] से कुछ ये रुपये मिला करते थे, फिर बन्द हो गये थे। किन्तु जब जितेन्द्र दादा ने [illegible] परम पवित्र [illegible] में अपनी [illegible] अपने आश्रय में [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] से दूर थी। वे भी [illegible] थे।

रमा—[illegible] मुझसे [illegible] [illegible] [illegible]

तड़ित०—मेरा पढ़ना-लिखना छूट गया था, मेरी साथिने एक कक्षा आगे निकल गई थी। सेविका बनने पर भी मुझे यह साफ दिखलाई दे रहा था कि और शिक्षा पा लेना मेरे लिए कितना अच्छा होगा। फिर मेरा भाई भी शिक्षा पा रहा था। मुझे कुछ अधिक तो मिलता न था। किन्तु ब्रजेशजी उस समय सहायक रूप से मेरे यहाँ नहीं आये। वे तब इस तरह आये जब मैं बिल्कुल बेकार बैठी थी।

उमा—जितेन्द्रजी उस समय अपने रुपये तुम्हे क्यो नहीं देते रहे?

तड़ित०—उन्हे मिलते ही न थे। वे तो वहाँ से चले गये थे।

उमा—ब्रजेशजी ने तुम्हे रुपये दिये?

तड़ित०—हाँ, और उन्होंने मुझे एक नये ही संसार मे खींच लिया।

वह अपने इस वाक्य पर झुँझला सी उठी। और बोली—मेरा मतलब यह है कि जितेन्द्र दादा के संसार का सर्वस्व है त्याग, संयम, आत्म-विश्वास और साथ ही समर्पण। किन्तु ब्रजेशजी का संसार आधुनिक अर्थशास्त्र, नवीन समाजशास्त्र और नये प्रेमशास्त्र से परिपूर्ण है। उन्होने मुझे अपना अमूल्य समय दिया, अमूल्य शिक्षाएँ दी और ऐसा जान पड़ा कि मुझे अपना प्रेम भी दिया!

'यही तुमने भूल की!' उमा ने गंभीरता से कहा। तनिक रुककर वह फिर बोली—पुरुषो मे से अधिकांश और तो सब जानते हैं पर प्रेम नहीं जानते और नहीं जान सकते। उनके मन और हृदय का इतना विकास ही नहीं हो पाता—हो भी नही सकता। तुम्हारे जितेन्द्र दादा का तुम्हारे साथ ठीक सहोदर भाई जैसा स्नेह होने मे मुझे सन्देह नही है, पर तुम इस भूल में कभी न पड़ना कि तुम उनके साथ अपना जीवन इसी तरह काट सकती हो। दुनिया इसे सह भी न सकेगी। तुम दोनों को बेहद बदनाम कर

ब्रजेश से विवाह न हो और दिखला रहे हैं कि तुम्हारे मार्ग से कला को हटाने के लिए ही वे उसके प्रेमी बन गये हैं। क्या इसी का नाम प्रेम है ?

तड़ित०—पर विवाह के पहले प्रेम को तो आप ठीक भी नहीं समझतीं ?

उमा—'क्या इसी लिए वे इस समय ऐसा प्रेम दिखा रहे हैं ? विवाह के बाद सच्चे प्रेमी हो जावेंगे ?' उमा हँस रही थी पर वह हँसी आनन्द की न थी।

तड़ित० —क्यों न हो जावेंगे ? और शायद इस समय भी वे ऐसे हो गये हैं।

उमा—'तुम ऐसा कह सकती हो—तुम उनकी बहन हो—हम लोग ऐसा नहीं समझतीं !' उमा का स्वर कठोर था।

'क्यो ? आप ऐसा क्यो नहीं समझतीं ?' तड़ित ने विनीत और बहुत मृदु ढंग से कहा।

उमा—क्योंकि उन्हे ब्रजेश से द्वेष है—उन्हे जान पड़ता है कि ब्रजेशजी तुम्हे पथभ्रष्टा बना रहे है। तुम्हें रोक रखने की शक्ति न होने से वे स्वयं भी पथभ्रष्ट हो रहे है।

तड़ित बिल्कुल चुप हो रही।

थोड़ी देर में उमा ने कहा—मेरी बातो से बुरा न मानना, तुमने अपना हृदय खोला, इसी लिए मैने भी अपने मन की बातें साफ़-साफ़ कह दीं। मेरी अवस्था कितनी है, बतला सकती हो ?

तड़ित ने बिना उमा की ओर देखे उत्तर दे दिया—पचीस-छब्बीस।

उमा हँसकर बोली—मेरी ओर देखकर बताओ। क्या इससे अधिक नहीं है ?

तड़ित ने उनकी ओर देखकर कहा—नहीं।

वैदिक काल में, या चन्द्रगुप्त आदि के समयों के बारे में पढ़ा था। मेरी भूल थी दादा—

बात काटकर जितेन्द्र ने कहा—ठहरो तड़ित! व्यर्थ आवेश मे न आओ। तुम्हारी भूल रही हो या न रही हो, तुम्हारे विवाह में सचमुच बाधा डाल देने का दुस्साहस करके कोई उसे रोक नहीं सकता—उसे रोकने की शक्ति इस समय समाज में बिल्कुल नहीं है।

'पर इससे तो बेबसी ही साबित होती है न? यह सहर्ष अनुमोदन तो नहीं है?' तड़ित ने पीड़ित हृदय से कह दिया।

'उन सबकी सहायता तुम्हें मिलेगी जो जानते हैं कि कोई सामाजिक प्रणाली अंतिम या अपरिवर्तनीय नहीं होती—सभी मे बुराइयाँ आ जाती है, सडन और दुर्गन्धि आने लगती है और सबमे कभी सुधार, कभी क्रान्ति की आवश्यकता होती है। सफाई करने और स्वस्थ जीवन पाने के लिए ऐसा समझ सकनेवालो की संख्या इस समय इतनी अधिक हो गई है और इस दल मे ही प्रायः सभी युवकों के होने के कारण हम सबकी शक्ति इतनी अधिक है कि अब कट्टरपंथी, संकीर्ण हृदयवाले या भ्रम मे फँसे लोग तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड सकते।' जितेन्द्र ने अपने स्वर को शांत रखने का प्रयत्न करते हुए कहा।

तड़ित०—मैंने ऐसा ही तो समझ लिया था दादा, पर अब मुझे साफ़ जान पड़ता है कि असल मे ऐसा नहीं है। जिन शिक्षित युवको पर तुम्हें सबसे अधिक भरोसा है, उन्हीं में से अधिकाश मुझे कोरी बातें बनानेवाले, सिद्धान्तो की डींग हाँकनेवाले और काम के समय मैदान से भाग खड़े होनेवाले, कठिनाई का सामना करने से जी चुरानेवाले ही जान पड़ते हैं। ऐसा न होता तो इतने अधिक समय से अब तक उन्होंने दहेज के नाम पर अपने बेंचे जाने के विरुद्ध दो-चार भारतव्यापी

वैदिक काल में, या चन्द्रगुप्त आदि के समयो के बारे मे पढ़ा था। मेरी भूल थी दादा—

बात काटकर जितेन्द्र ने कहा—ठहरो तडित! व्यर्थ आवेश मे न आओ। तुम्हारी भूल रही हो या न रही हो, तुम्हारे विवाह में सचमुच बाधा डाल देने का दुस्साहस करके कोई उसे रोक नहीं सकता—उसे रोकने की शक्ति इस समय समाज मे बिल्कुल नहीं है।

'पर इससे तो बेबसी ही साबित होती है न? यह सहर्ष अनुमोदन तो नहीं है?' तडित ने पीड़ित हृदय से कह दिया।

'उन सबकी सहायता तुम्हें मिलेगी जो जानते हैं कि कोई सामाजिक प्रणाली अंतिम या अपरिवर्तनीय नही होती—सभी मे बुराइयाँ आ जाती हैं, सड़न और दुर्गन्धि आने लगती है और सबमे कभी सुधार, कभी क्रान्ति की आवश्यकता होती है। सफाई करने और स्वस्थ जीवन पाने के लिए ऐसा समझ सकनेवालो की संख्या इस समय इतनी अधिक हो गई है और इस दल में ही प्रायः सभी युवकों के होने के कारण हम सबकी शक्ति इतनी अधिक है कि अब कट्टरपंथी, संकीर्ण हृदयवाले या भ्रम मे फँसे लोग तुम्हारा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते।' जितेन्द्र ने अपने स्वर को शात रखने का प्रयत्न करते हुए कहा।

तडित०—मैंने ऐसा ही तो समझ लिया था दादा, पर अब मुझे साफ जान पडता है कि असल मे ऐसा नहीं है। जिन शिक्षित युवको पर तुम्हें सबसे अधिक भरोसा है, उन्हीं मे से अधिकाश मुझे कोरी बातें बनानेवाले, सिद्धान्तो की डींग हाँकनेवाले और काम के समय मैदान से भाग खड़े होनेवाले, कठिनाई का सामना करने से जी चुरानेवाले ही जान पड़ते हैं। ऐसा न होता तो [illegible] समय से अब तक उन्होंने दहेज के नाम पर [illegible] के विरुद्ध दो-चार भारतव्यापी आन्दोलन

मामा—तो तुम यह विजातीय विवाह अवश्य करके अपनी सन्तान को वर्णसंकर बनाओगे ?

व्रजेश जोर से हँस पड़े। बोले—आपने तो इस समय के ससार के गौर वर्णवालों को—युरोप और अमेरिका आदि के गौराङ्गो को—भी मात कर दिया। उनमे से अधिकाश का यही मत है जिससे वे काले और रंगवाले लोगो के साथ, जिनमे हमारे देश के सभी लोग सम्मिलित हैं, विवाह करने के विरोधी है। पर वैज्ञानिक लोग जानते है कि अगर मनुष्य-जाति को स्वस्थ और सौन्दर्यशाली रखना है तो सबसे अधिक आवश्यकता ऐसे विवाहो की है। सच्चे विश्वबन्धुत्व की ओर जाने का भी और कोई उपाय लाभप्रद नहीं हो सकता जब तक—

मामा ने बात काटकर कहा—व्याख्यान न दो। ऐसा यहाँ कभी पहले हुआ था ? इस समय की बात मैं नहीं पूछता।

व्रजेश—क्या आप यह भी नहीं जानते हैं कि परम पूज्य ऋषि वशिष्ठ और पराशर किसकी सन्तान थे और उनका विवाह या ऐसा सम्बन्ध किसके साथ हुआ था ? वशिष्ठ वेश्यापुत्र थे। उन्हे कर्दम ऋषि की कन्या अरुन्धती व्याही गई। इनके पुत्र शक्ति का विवाह एक चाण्डाल-कन्या से हुआ, जिससे पराशर मुनि का जन्म हुआ। पराशर और धीवर-कन्या सत्यवती से भगवान् वेदव्यास हुए। सच पूछिए तो श्वेतकेतु के पहले विवाह-प्रथा थी ही नहीं। मनुष्य-जाति के विकास का इतिहास इससे सहमत है।

अब मामाजी आगे न सुन सके। जोर से बोले—धिक्कार है तुम लोगो की शिक्षा और बुद्धि को। अरे हमारा धर्म सत्य सनातन धर्म है—अनादि, अनन्त और सर्वथा अपरिवर्तनीय। तुम अपने को उन अभ्रान्त ऋषियो से भी बढ़े-चढ़े मानते हो ?

२७

दो वर्ष बाद। लखनऊ के उसी मुहल्ले मे जिसमें तड़ितवाला की 'शान्तिकुटी' है, उस कुटी से थोडी दूरी पर अपने 'सेवाकुंज' मे जितेन्द्र कला से वातचीत कर रहे थे।

'मैंने तो यही सोचा था कला, कि मेरे और तड़ित बहन के चले जाने पर तुम्हारा ब्रजेशजी के साथ विवाह हो जावेगा और हम लोग जेल से लौटकर आवेगे तब तुम्हे चिढ़ावेगे।' जितेन्द्र ने कहा।

कला ने उत्तर दिया—'वलि चाहा आकाश को हरि पठवा पाताल।' आप मुझसे जितना ही भागे, मुझे उतना ही आपकी ओर आना पडा। अन्त मे आप पकड़ाई दे ही गये। सन्यासी-पन का ढोग छोड़कर सच्चे कर्मयोगी के क्षेत्र मे आपको आना पड़ा। डाक्टर का विवाह तो डाक्टर से ही हो सकता है—नहीं तो वर्ण-व्यवस्था टूटती है। ब्रजेशजी का विवाह मेरे साथ कैसे हो सकता था?

'पर मै तो कलाकार नहीं हूँ। तुमने मेरे साथ अपना विवाह क्यों किया?' जितेन्द्र ने हँसते हुए पूछा।

'कलाकार न होते तो आप इस देश की कुरूपता को हटाकर उसे सौन्दर्यशाली वनाने के लिए अपने आपको इस तरह समर्पित कैसे करते। यही तो सच्चे कलाकार की सच्ची कसौटी है। पर अपनी वहन तड़ित के साथ इस तरह भागकर आपने अपने विरोधियों को हँसने का अवसर ख़ूब दिया था। पहले धन्यवाद दीजिए मुझे और ब्रजेशजी को कि हम दोनो भी आपके निकट पहुच गये और तव उमा ने भी साथ दिया, नहीं तो—'

हमारा विकास नहीं हुआ, हुई है घोर अवनति, धर्म में विकास और परिवर्तन! राम! राम!

ब्रजेश—यह सब तो स्वयं मूर्ख बनने या अन्य लोगों को मूर्ख बनानेवाली बातें हैं। परिवर्तन तो पत्थर तथा मुर्दे मनुष्य तक में होता है—नहीं तो—

मामा—आह! हम लोगों ने जो तुम्हें अँगरेजी की शिक्षा-दीक्षा दिलाई और डाक्टरों के विद्यालय में पढ़ाया, उसका यह भयानक फल भुगतना ही पड़ेगा।

ब्रजेश—यह बहुत कुछ ठीक है। आप लोगों में यदि अपनी धर्म-बातों और अपने शास्त्रों के श्रेष्ठतर होने का दृढ़ विश्वास होता तो आप हमें दूसरों के ग्रन्थ इस तरह पढ़ने के लिए न भेजते। अपनी अशक्ति और अपने में अविश्वास होने से ही तो ऐसा हो रहा है। इसी से आप लोगों का ढोंग प्रकट हो जाता है। पर आप अपने शास्त्रों को भी तो नहीं जानते। तो, क्या मानेंगे क्या?

एकाएक एक आदमी ने आकर कहा—[illegible] जल्दी भाग चले!

लाला साहब यह सुनते ही हर्ष से उछल पड़े। [illegible] बोले—धन्य है प्रभो! खूब किया! कैसा बढ़िया बदला [illegible] जल्दी मिला!

ब्रजेश [illegible] बाहर चले गये।

२७

दो वर्ष बाद। लखनऊ के उसी मुहल्ले मे जिसमे तड़ितवाला की 'शान्तिकुटी' है, उस कुटी से थोड़ी दूरी पर अपने 'सेवाकुंज' मे जितेन्द्र कला से बातचीत कर रहे थे।

'मैंने तो यही सोचा था कला, कि मेरे और तड़ित बहन के चले जाने पर तुम्हारा व्रजेशजी के साथ विवाह हो जावेगा और हम लोग जेल से लौटकर आवेंगे तब तुम्हे चिढ़ावेगे।' जितेन्द्र ने कहा।

कला ने उत्तर दिया - 'बलि चाहा आकाश को हरि पठवा पाताल।' आप मुझसे जितना ही भागे, मुझे उतना ही आपकी ओर आना पड़ा। अन्त मे आप पकडाई दे ही गये। संन्यासी-पन का ढोंग छोड़कर सच्चे कर्मयोगी के क्षेत्र मे आपको आना पड़ा। डाक्टर का विवाह तो डाक्टर से ही हो सकता है—नहीं तो वर्ण-व्यवस्था टूटती है। व्रजेशजी का विवाह मेरे साथ कैसे हो सकता था?

'पर मैं तो कलाकार नहीं हूँ। तुमने मेरे साथ अपना विवाह क्यो किया?' जितेन्द्र ने हँसते हुए पूछा।

'कलाकार न होते तो आप इस देश की कुरूपता को हटाकर उसे सौन्दर्यशाली बनाने के लिए अपने आपको इस तरह समर्पित कैसे करते। यही तो सच्चे कलाकार की सच्ची कसौटी है। पर अपनी बहन तड़ित के साथ इस तरह भागकर आपने अपने विरोधियों को हँसने का अवसर खूब दिया था। पहले धन्यवाद दीजिए मुझे और व्रजेशजी को कि हम दोनो भी आपके निकट पहुँच गये और तब उमा ने भी साथ दिया, नहीं तो—'

२७

दो वर्ष बाद । लखनऊ के उसी मुहल्ले में जिसमे तड़ितबाला की 'शान्तिकुटी' है, उस कुटी से थोड़ी दूरी पर अपने 'सेवाकुंज' मे जितेन्द्र कला से बातचीत कर रहे थे ।

'मैंने तो यही सोचा था कला, कि मेरे और तड़ित बहन के चले जाने पर तुम्हारा व्रजेशजी के साथ विवाह हो जावेगा और हम लोग जेल से लौटकर आवेगे तब तुम्हे चिढ़ावेगे ।' जितेन्द्र ने कहा ।

कला ने उत्तर दिया—'बलि चाहा आकाश को हरि पठवा पाताल ।' आप मुझसे जितना ही भागे, मुझे उतना ही आपकी ओर आना पडा । अन्त में आप पकड़ाई दे ही गये । सन्यासी-पन का ढोंग छोडकर सच्चे कर्मयोगी के क्षेत्र मे आपको आना पडा । डाक्टर का विवाह तो डाक्टर से ही हो सकता है—नहीं तो वर्ण-व्यवस्था टूटती है । व्रजेशजी का विवाह मेरे साथ कैसे हो सकता था ?

'पर मैं तो कलाकार नहीं हूँ । तुमने मेरे साथ अपना विवाह क्यो किया ?' जितेन्द्र ने हँसते हुए पूछा ।

'कलाकार न होते तो आप इस देश की कुरूपता को हटाकर उसे सौन्दर्यशाली बनाने के लिए अपने आपको इस तरह समर्पित कैसे करते । यही तो सच्चे कलाकार की सच्ची कसौटी है । पर अपनी बहन तडित के साथ इस तरह भागकर आपने अपने विरोधियों को हँसने का अवसर ख़ूब दिया था । पहले धन्यवाद दीजिए मुझे और व्रजेशजो को कि हम दोनो भी आपके निकट पहुँच गये और तब उमा ने भी साथ दिया, नहीं तो—'

बात काटकर जितेन्द्र ने कहा—'नहीं तो' हम लोगों के जीव नहीं है कला। किसी की बहू-बेटियों को लेकर भागना री का रोमांस है। स्वदेश-सेवा के लिए भाई-बहन का इस भागना ही सच्चा रोमांस और सच्चा आनन्द है। पर य सच है कि उमा ने जिस दिन लखनऊ में तुम्हारी उचित प्रशं मुझे तुम्हारा फोटो दिखलाया था, उसी दिन मैंने तुम्हें लेने का निश्चय कर अपना इस समय का रूप बहुत देख लिया था।

कला लज्जित हो गई। फिर बोली—उमा ने भी बार-बार ऐसा कहा पर मुझे विश्वास न होता था और पूरी तरह नहीं होता। हाँ, अगर आप यह कहें कि जेल में अपने पास देखकर आप मुझे अपनी जीवन-संगिनी बना ले तैयार हो गये तो शायद ठीक हो।

जितेन्द्र—यह 'शायद' ठीक हो, पर जो मैं कहता हूँ शायद की गुंजाइश नहीं। तुम मेरी ओर जेल में शायद आकर्षित हो सकी हो, इसी लिए तुम मेरे लिए भी ऐसा सोचती

कला ने और सकुचित हो बात पलट दी; कहा—ब्रजे के नौकरी से त्यागपत्र देने से माँ को बहुत कष्ट हुआ। अन्य कई सम्बन्धी और पुराने मित्र तो उन्हें पागल ही कह लगे। ऐसे लोगों के पतन की सीमा ही नहीं है। ब्रजेश की डाक्टरी चल जाने में तो सन्देह नहीं है न? वे तो वैद्य हकीमी, होमियोपैथी, सभी ढंगों से इलाज करने में निपु हो गये हैं।

जितेन्द्र—ये दोनों अपना काम अच्छी तरह चलाने भर अवश्य पा जाते हैं। साथ ही सार्वजनिक कार्यों के लिए पू समय और शक्ति भी इनके पास है।

थोड़ी देर चुप रहकर जितेन्द्र ने फिर कहा—अब तुम अपनी बहन करुणा का विवाह किरणगुप्त से कर डालो। अब इसमें कोई चूँ तक न कर सकेगा।

कला ने हँसकर कहा—खूब! अब तो आप विवाह ही विवाह चाहते हैं। हम लोग अभी ऐसा विवाह करनेवाले कौन हैं? चार-पाँच साल बाद एक दिन किरणगुप्त स्वयं ऐसा प्रस्ताव करेंगे तब उसकी स्वीकृति देने न देने पर, करुणा की ओर से, विचार किया जावेगा।

जितेन्द्र—फिर भी विचार!

कला—और क्या? विवाह के पहले क्या उन्हें कार्य्यक्षेत्र में कुछ भी काम करके न दिखाना होगा?

जितेन्द्र—इसकी तो उन दोनों से पूरी आशा है। तीन-तीन महीने का समय तो उन्होंने भी इस बार व्यावहारिक सेवा-क्षेत्र में अनुभव प्राप्त करने के लिए दिया। अगली बार तीन साल का समय देने को भी वे कम समझेंगे। इसी बीच सामाजिक क्षेत्र में हमें ऐसा सगठन कर लेना होगा कि हम स्थान स्थान पर सैकड़ो लोगों के विवाह अनुचित जाति-पाँति तोड़कर उचित ढंग से करा सकें। स्वदेश की वास्तविक शक्ति बढ़ाने के लिए तो ऐसे हिन्दुस्तानी विवाहो की जरूरत है ही, संसार की संगठन-शक्ति भी इसी तरह ठीक ढंग से बढ़ सकेगी।

कला ने हँसकर कहा—तब तो सब काम छोड़कर पहले यही करना चाहिए।

जितेन्द्र—सब काम सामाजिक, राजनीतिक आदि साथ साथ चलते हैं। एक को छोड़ देने से दूसरे मे भी पिछड़ जाना पड़ेगा। सब में सामञ्जस्य से ही उचित गति सम्भव है। इसी से तो मैंने तुम्हें अपनी जीवन-संगिनी बना लिया है। बाहर से एक साथ

कई आवाज़ें आईं—अजी संन्यासी जितेन्द्रजी, कोठे से नीचे तो आइए। कलाजी बाहर न निकलिएगा क्या ?

वे आवाज़ें ब्रजेश, तड़ित और उमा की थीं। वे लोग आकर बाहर हँस रहे थे।

उमा अब अपने पति के साथ लखनऊ में ही रहने लगी थी। वहीं उनके समाचारपत्र का कार्यालय भी आ गया था।

—